हार या जीत ?

श्रीमती भारती विद्यार्थी, बी० ए०, एल० टी०

श्री देवदूत विद्यार्थी, "शिशु-हृदय"

प्रकाशक

राजहंस प्रकाशन, दिल्ली ६।

समर्पण

उत्तर और दक्षिण भारत के एकता-सूत्रों को मज़बूत बनाने में प्रयत्नशील भाई-बहनों को सादर-सप्रेम समर्पित।

निवेदन

इस पुस्तक को प्रकाश में लाने में एक झिझक-सी जो मालूम हो रही है, उसका तकाज़ा है कि पाठकों को अपने "कॉनफिडेन्स" में लेकर शुरु में ही प्रकट कर दिया जाय कि यह पुस्तक वास्तव में एक उपन्यास नहीं, उपन्यास की एक "एपॉलोजी" के तौर पर लिखी गई है। पहले तो, इसकी प्रेरणा ही एक सपने से मिली है जो हममें से एक को आज से ढाई दशक पहले हुआ था। वह एक अनोखा सपना था जो उसी समय लिपिबद्ध कर लिया गया था। १९५० में थोड़ा निश्चिन्त अवकाश मिलने पर उसके आधार पर एक कहानी लिखी गई। बाद को हम दोनोंने मिलकर उस कहानी को वर्तमान "उपन्यास" का रूप दिया। और पाण्डु लिपि की स्याही सूखी भी न थी कि "राजहंस प्रकाशन" के व्यवस्थापकों को इसकी गन्ध मिल गई। यह हमारी कल्पना के बाहर की बात थी कि घर बैठे राष्ट्रभाषा के भण्डार को भरने के अभिलाषी, उत्साही प्रकाशक हमें मिल जायेंगे। हमारा तो विचार था कि इसे कुछ दिन अपने पास ही पड़े रहने देना ठीक होगा। लेकिन भाई अमरचन्द जी और सुबुद्धि नाथ जी की दलील के सामने वह विचार हवा हो गया। पुस्तक रोचक है, छोटी है, और सबसे बढ़कर इसमें कहीं अश्लीलता नहीं है, ये बातें उनकी दृष्टि में पर्याप्त थीं। और फलतः यह अब पाठकों के हाथ में जा रही है। पाठक ही निर्णय करें कि इसका प्रकाशन करके गलती तो नहीं की गई।

यहाँ हम सहर्ष इसका उल्लेख कर देना चाहते हैं कि इसके निर्माण काल में कई मित्रों ने इसमें दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साह बढ़ाया

था। हम विशेषकर श्री सीताचरण दीक्षित और श्रीमती रत्नमयी दीक्षित के अत्यन्त आभारी हैं जिनके सुझावों से हमने बहुत लाभ उठाया।

—लेखक-द्वय

बालिका विद्यापीठ,
लक्खीसराय (बिहार)
२६ जनवरी १६५३

' हार या जीत ?' पर कुछ सम्मतियां

(माननीय श्री हरिभाऊ उपाध्याय, मुख्य मंत्री अजमेर राज्य)

"..........जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब यह निर्णय करना बहुत कठिन हो जाता है कि यह अपनी हार है या जीत । ऐसा ही उपन्यास की नायिका के जीवन में भी आता है । लेखकों ने हार या जीत का निर्णय पाठकों पर सौंप दिया है । राष्ट्र के उत्थान में आज राष्ट्रीयता की भावना का प्रचार होना आवश्यक है । इस उपन्यास के पाठकों को इसमें राष्ट्रीय भावनाओं का कहीं भी अभाव न मिलेगा"

(डाक्टर रांगेय राघव, एम० ए०; पीएच० डी०)

श्री देवदूत विद्यार्थी तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती भारती का यह प्रथम मौलिक उपन्यास है । इसमें कलात्मकता के साथ एक ऐसी नवीनता है जो हिन्दी के लिये स्तुत्य है । हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिये यह आवश्यक है कि भारत के विभिन्न प्रांतों में के जीवन को साहित्य में उतारा जाये; और श्री विद्यार्थी तथा श्रीमती भारती ने यह कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक किया है । इसलिये लेखक-दंपति बधाई के पात्र हैं ।

(बाबू गुलाब राय, एम० ए०)

यह ग्रन्थ वर्णन प्रधान तो है ही किन्तु इसके नायक देवेन्द्र और नायिका सरला के चरित्र चिरस्मरणीय रहेंगे । वास्तव में नायिका को ही प्रधानता मिली है । उसी की हार या जीत होती है । इसका अन्त दुखमय है । किन्तु इसकी दुखात्मकता नायक और नायिका के त्याग और तप को महत्ता देती है ।............इस पुस्तक का एक राष्ट्रीय महत्व भी है । वह यह कि यह उत्तर को दक्षिण का परिचय कराने में समर्थ होगी ।

(डाक्टर सत्येन्द्र एम० ए० पीएच० डी०)

मुझे यह छोटा उपन्यास रोचक लगा। विवाह की सामाजिक व्यवस्था को केन्द्र बिन्दु की भांति स्वीकार करके दक्षिण भारत के प्राकृतिक सौष्ठव और सामाजिक संस्कारों की पृष्ठभूमि में व्यक्तित्व सम्पन्न नारियों और नर अवतरित होकर जीवन और विवाह को समस्याओं के स्वरूपों को विविध दृष्टियाँ प्रदान करते हुये कहानी का निर्माण करते हैं। प्रासंगिक रूप से ईसाई धर्म का कुछ विस्तृत किन्तु मार्मिक और प्रामाणिक सहानुभूतिपूर्ण समावेश, ज्ञान, रूचि और भावानुभूति को संस्कृत और समृद्ध करने में सहायक होता है। यद्यपि उपन्यास में आदि से अन्त तक प्रेम का ही वातावरण है और वह आद्यान्त संयम की पावन्ता से अभिनन्दनीय है, फिर भी राष्ट्र और जन-सेवा के क्षेत्र में भी उपन्यासकार हमें ले गये हैं। वहाँ अपने युग की समस्याओं के सुलझाने के संकेत और प्रेरणा-स्रोत विद्यमान हैं। हम हिन्दी में जैसे सुष्ठु उपन्यास का स्वागत करते हैं।

(डाक्टर रामविलास शर्मा, एम० ए०, पी० एच० डी०)

यह उपन्यास हिन्दी में अपने ढंग का अनूठा है। इसमें केरल के सामाजिक जीवन का सरस और सजीव चित्रण किया गया है। अनेक समस्यायें हिन्दी पाठकों को नयी मालूम पड़ेंगी। इस उपन्यास के पात्र जीते-जागते, घटनाएँ स्वाभाविक और कथानक रोचक तथा शिक्षाप्रद है। श्रीमती देवदूत विद्यार्थी ने मलयालम से हिन्दी में अनेक उपन्यास अनुवादित किये हैं। और श्री देवदूत विद्यार्थी ने नाटक और गद्यकाव्य में सराहनीय कार्य किया है। यह उपन्यास बिहार और केरल के सहयोग का सुन्दर फल है। आशा है हिन्दीभाषी इसका आदर करेंगे। और विद्यार्थी दंपति उन्हें दूसरी कृतियों से भी अनुगृहीत करेंगे।

श्रीमती भारती विद्यार्थी की रचनायें

१. चुनौती (उपन्यास) मलयालम से अनूदित
२. मलयानिल (कहानी संग्रह) ,, ,, प्रेस में
३. दो सेर (उपन्यास) ,, ,, अप्रकाशित
४. नाले से (उपन्यास) ,, ,, अप्रकाशित
५. मलयालम स्वयं शिक्षक

श्री देवदूत विद्यार्थी की रचनायें

१. कुमार-हृदय का उच्छ्वास (गद्यकाव्य)
२. तूणीर (गद्यकाव्य)
३. दीवान बहादुर (नाटक, दक्षिण भारत की पृष्ठ भूमि पर)
४. राज-भाषा बोधिनी (Hindi Self Taught in English)
५. भारतीय राष्ट्रीयता
६. कला, काव्य और कवि (एक व्याख्यान)
७. धर्म तत्व (एक व्याख्यान)
८. स्त्री जाति का भूत और भविष्य (एक व्याख्यान)
९. "शिशु-हृदय" के पत्र (लेखमाला के रूप में प्रकाशित)
१०. ऋषि [खलील जिब्रान के "प्रॉफेट" का अनुवाद (अप्रकाशित)]
११. The Geeta through modern eyes (व्याख्यान)
१२. वह युवक [एक जीवनी (अप्रकाशित)]

हार या जीत

पहला भाग

: १ :

"उसके न माँ है, न बाप है ! उसे कैसा लगता होगा ? पिताजी, ऐसे लड़कों को मदद के लिये कोई इन्तजाम नहीं है क्या ?

"कालेज में फीस माफ हो सकती है। प्रिन्सिपल ने माफ कर देने का वचन दिया है।"

सरला अपने पिता प्रोफेसर शंकर मेनोन को माता माधवी अम्मां के साथ देवेन्द्र के बारे में बातें करते सुनकर उपर्युक्त प्रश्न करने से रुक नहीं सकी। पिता से देवेन्द्र की स्थिति का वर्णन सुनकर उसके हृदय में एक सहज सहानुभूति पैदा हो गई थी।

देवेन्द्र एक विद्यार्थी है। उसने प्रोफेसर मेनोन से प्रार्थना की है कि वे उसके लिये कहीं ट्यूशन का इन्तजाम कर दें। उसके लिये न तो रहने का ठिकाना है, न भोजन का प्रबन्ध। जब वह बहुत छोटी उम्र का था, तभी उसके पिता का देहान्त हो गया था। माँ मेहनत मजदूरी करके उसे पढ़ा रही थी। दो साल पहले वह भी चल बसी। उसके बाद उसने ट्यूशन करके अपना काम चलाया और एम०एस०एल०सी० परीक्षा पास की। अब अपने गाँव से आकर कालेज में भर्ती हो गया है।

प्रोफेसर मेनोन, माधवी अम्माँ और सरला के बीच देवेन्द्र के बारे में कुछ देर तक बातें होती रहीं। माधवी अम्माँ की सलाह से देवेन्द्र को पार्वती अम्माँ के यहाँ उनकी पुत्री लीला का ट्यूशन दिला देने का

विचार पक्का हो गया। अन्त में प्रो० शंकर मेनोन ने कहा, "तब तो पार्वती अम्माँ से बातें करनी चाहियें। मैंने उस लड़के से कह दिया है कि जब तक कहीं प्रबन्ध न हो जाय, यहीं आकर रहे।"

माधवी अम्माँ—अच्छा ही किया है।

सरला—आज आयेगा, पिता जी!

शंकर मेनोन—आना तो चाहिये।

× × ×

शंकर मेनोन कोच्चिन की राजधानी के गवर्नमेंट कालेज में प्रोफेसर हैं। अपनी विद्वत्ता के लिये तो प्रसिद्ध हैं ही। उससे भी बढ़कर अपनी उदारता और शालीनता के लिये प्रसिद्ध हैं। कालेज के विद्यार्थी उन्हें बड़ी श्रद्धा से देखते हैं। कोई उनके पास सहायता के लिये आकर निराश होकर नहीं लौटता।

राजधानी समुद्रतट पर बसा एक स्वच्छ सुन्दर नगर है। उसकी एक तरफ़ लहराता हुआ समुद्र हृदय को उद्वेलित करता है तो दूसरी तरफ़ लहलहाते धान के खेतों की हरियाली आंखों को ठण्डक पहुंचाती है। सारा नगर केले, नारियल और सुपारी आदि के एक बड़े बाग-सा शोभित है।

राजधानी की एक चौड़ी सड़क के किनारे एक बड़े अहाते के फाटक पर "शान्ति कुंज" का नाम-पट्ट लटक रहा है। भीतर का मकान फूलपत्तों और फलवृक्षों से घिरा हुआ है। सारे अहाते में शान्ति और सुन्दरता का राज्य है। इसी शान्तिकुंज में प्रोफेसर मेनोन अपनी पत्नी और इकलौती पुत्री के साथ निवास करते हैं।

पार्वती अम्माँ एक सुसम्पन्न परिवार की महिला हैं। उनके स्वर्गीय पति प्रोफैसर मेनोन के एक घनिष्ठ मित्र थे। उनका बड़ा लड़का इङ्गलैंड में पढ़ने गया तब से लौटा नहीं। घर में वे अपनी दो पुत्रियों के साथ रहती हैं। बड़ी लड़की कुमुद सरला के साथ कोनवेण्ट हाई स्कूल में

पढ़ती है। छोटी लीला है जिसे पढ़ाने के लिये देवेन्द्र की नियुक्ति का विचार किया गया है।

× × ×

प्रोफेसर मेनोन जब पार्वती अम्माँ के घर पहुंचे, तब उन्हें दुखी पाया। कई महीनों से पार्वती अम्माँ को अपने पुत्र का कोई पत्र नहीं मिला था। आज उन्हें खबर लगी कि उनके पुत्र ने किसी अंग्रेज महिला से विवाह कर लिया है, और पढ़ाई छोड़कर वहीं नौकरी कर रहा है।

पार्वती अम्माँ ने कहा, "कौन कह सकता था कि गोपालन ऐसा निकलेगा ! कैसा सुशील और आज्ञाकारी लड़का था ! कैसे प्यार भरे पत्र लिखा करता था ! वह कैसे अब हम सबों को भुलाकर वहाँ विवाह करके नौकरी करने लगा है ! क्या हम लोग उसके कोई नहीं रहे !" कहते-कहते उनकी आँखों में आंसू आगये !

"इतना दुखी होने की बात नहीं है, बहन !" प्रोफेसर ने सान्त्वना देते हुए कहा। "गोपालन अपनी माँ को नहीं भुला सकता। वह जरूर आयेगा। आप उसे आशीर्वाद दीजिये कि वह जहाँ भी रहे सुखी रहे।"

"अब तो मेरे सामने अन्धकार ही अन्धकार नजर आ रहा है। क्या-क्या आशायें करके मैंने उसे इंगलैण्ड भेजा था। इस जिन्दगी का क्या ठिकाना ! कौन जाने उसका मुँह फिर देख सकूँगी या नहीं ?"

"नहीं नहीं, इस तरह निराश होने का कोई कारण नहीं है। इंगलैण्ड में रहने या वहाँ पर विवाह कर लेने से आदमी बदल थोड़े ही जाता है ! गोपालन अपने पैरों पर खड़ा होने लायक हो गया है। अब आपको इन छोटी बच्चियों के लिये अपना मन मजबूत बनाकर रहना है।"

पार्वती अम्माँ का चित्त जब थोड़ा शान्त हुआ तब उन्होंने कुमुद

और लीला के बारे में बातें उठाईं। उसी सिलसिले में शंकर मेनोन से लीला के लिये एक अच्छा शिक्षक ठीक कर देने को कहा।

मेनोन ने देवेन्द्र के बारे में जिक्र किया। कहा, "उसके और तो कोई है नहीं। अच्छा लड़का है। लीला को पढ़ाने के साथ-साथ वह और तरह से भी उपयोगी सिद्ध होगा। आपका सहारा पाकर पढ़ जाय तो आपका बड़ा उपकार मानेगा।"

पार्वती अम्माँ ने शंकर मेनोन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इस तरह देवेन्द्र की समस्या हल हो गई।

: २ :

करीब पाँच बजे सवेरे का समय है। कानवेएट[1] के अनाथालय के दर्वाजे पर दो विद्यार्थी खड़े हैं। एक के हाथ में एक नवजात बच्ची है। अनाथालय की व्यवस्थापिका सिस्टर-अलबर्टा दो अन्य सिस्टरों के साथ आ जाती हैं। एक विद्यार्थी ने कहा—

"हम अपने होस्टल से रवाना होकर पार्क की तरफ टहलने जा रहे थे। एक मोड़ के पास यह बच्ची पड़ी चिल्लाती हुई मिली। आप इसकी रक्षा का भार लेकर हमें अनुगृहीत करें।"

सिस्टर अलबर्टा ने बच्ची को अपने हाथ में लेते हुए कहा, "आप लोगों ने बड़ा अच्छा काम किया है। भगवान आपका भला करें।"

दूसरे विद्यार्थी ने कहा, "आपकी संस्था भाग्यहीनों के लिये एक आश्रय-स्थान है। बेचारी निर्दोष बच्ची! इसकी जन्मदात्री के लिये तो फांसी की सजा भी कम ही होगी।"

---

१ कान्वेएट—ईसाइयों का कन्या-स्त्री मठ। २. ईसा मसीह की भक्ति में जो लड़कियां आजीवन कुमारी रहने का व्रत ग्रहण करती हैं उनके लिये अंग्रेजी में "सिस्टर" शब्द का प्रयोग किया जाता है।

सिस्टर—नहीं-नहीं, इस स्वर्गीय पुष्प की जन्मदात्री के बारे में ऐसा कहना शायद न्यायसंगत नहीं होगा। वह वास्तव में दया की पात्र है।

विद्यार्थी—कैसा जघन्य कार्य है! अपनी ही बच्ची को, अपने हृदय के टुकड़े को, मरने के लिये फेंक देने वाली माँ कितनी हृदय हीन होगी!

सिस्टर—गलती करने वालों से प्रभु ही जवाबतलब कर सकते हैं। हमारा काम प्रभु की प्रार्थना करना और दीन-दुखियों और निस्सहायों को सेवा करना है। प्रेम और दया से ही पतित आत्माओं का उद्धार हो सकता है।

विद्यार्थी—सिस्टर, मैंने जो कुछ कहा उसके लिए क्षमा करें।

सिस्टर—अनेक बुराइयों की जड़ अज्ञान, गरीबी और स्वार्थ ही है। हम उन्हें जितना दूर कर सकेंगे उतना ही समाज का कल्याण होगा।

इतनी बात-चीत के बाद सिस्टर ने अपने रजिस्टर में विद्यार्थियों के नाम पते लिख लिये और वे दोनों अभिवादन करके चले गये।

× × ×

बच्ची को अन्दर ले जाकर सब से पहले उसे नहलाया गया। एक विद्यार्थिनी बड़ी तत्परता से बच्ची को सम्भालने में लग गई।

सिस्टर अलबर्टा ने कहा, "क्यों ईवा, तुम्हें इस बच्ची की सेवा-शुश्रूषा में आनन्द आता है!"

ईवा—हां, सिस्टर, इसे देखते ही मुझे अपनी छोटी बहन की याद आ गई जिसके जन्म के दसवें दिन ही, मुझे यहां चला आना पड़ा।

इसकी बपतिस्मा[1] में मुझे ही इसकी 'गॉड मदर'[2] बनने दें तो मुझे बहुत खुशी होगी।

सिस्टर—तुम अपनी बेटी का क्या नाम रखोगी ?

ईवा—अंजिला।

सिस्टर—सचमुच यह अंजिला ही है। दिव्य कन्या की तरह सुन्दर और मधुर। अच्छा, जाकर इसके लिये जल्द एक दो फ्राक सींकर लाओ तो।

ईवा खुशी से कपड़ा सींकर लाने दौड़ गई। लौटते समय अपने कमरे से पाउडर और कंघी भी लेती आई। बच्ची को पाउडर लगाकर फ्राक पहना दिया और कंघी से धीरे-धीरे उसके बाल साफ़ कर के सिस्टर अलबर्टा के हाथ में दे दिया। सिस्टर ने उसे बोतल से दूध पिलाया और मदर-सुपीरियर[3] को दिखाने ले गईं।

सरला रोज़ की तरह कुमुद के साथ जब कान्वेंट-स्कूल पहुँची तब देखा कि लड़कियाँ अनाथालय की तरफ़ उत्सुकतापूर्वक दौड़ी जा रही हैं और उस तरफ़ बेदस्तूर एक भीड़-सी लगी है। ये दोनों भी वहाँ पहुँच गईं जहाँ बच्ची को पालने में रख कर ईवा झुला रही थी। कुछ लड़कियाँ आपस में टीका टिप्पणी भी कर रही थीं।

ईवा, जो सरला की सहपाठिनी और मित्र थी, सरला के पास आ गई और उसे बच्ची को अनाथालय में लाये जाने की सारी बातें कह सुनाईं। इतने में स्कूल की घण्टी बजी और सब अपनी अपनी क्लास की तरफ दौड़ पड़ीं।

× × ×

---

१ नवजात बालक या किसी विधर्मी को ईसाई धर्म में लाने की विधि।

२ धर्म-माता, ईसाइयों में बच्चों के बपतिस्मा के समय किसी को धर्म-माता और धर्म-पिता बनाने की प्रथा है।

३ कन्या-स्त्री मठ की अधिष्ठात्री।

सरला उस बच्ची को देखने के बाद अन्यमनस्क हो गई। उसे एक धक्का-सा लगा। उसके निश्चिन्त, प्रसन्न और आज़ाद जीवन में यह पहला अवसर था जब कि उसका ध्यान समाज की एक ऐसी समस्या की तरफ गया, जिसके परिणाम स्वरूप वह नवजात बच्ची उस दिन कानवेण्ट के अनाथालय में पहुँचाई गई थी। उसमें उसे स्त्री-वर्ग की निर्बलता और निस्सहायता दिखाई दी और पुरुषवर्ग का स्वार्थ और निष्ठुरता। क्या इसका कोई उपाय नहीं हो सकता जिससे इस तरह की दुखद घटनायें न घटें ? इन्हीं विचारों में वह डूबती उतराती रही।

शाम को छुट्टी के बाद जब सब खेल के मैदान में पहुँचीं तब सरला रोज़ की तरह खेल में शामिल होने के बदले ईवा को लेकर अलग जा बैठी। उस बच्ची की चर्चा करते हुए ईवा ने कहा कि सवेरे तो वह निर्जीव-सी लगती थी लेकिन अब उसमें कुछ ताकत और ताजगी आ गई है। मदर सुपीरियर ने उसकी ठीक से देख-भाल करने की खास हिदायत दी है। डाक्टर को बुलवा कर जाँच भी करा दी गई है।

सरला—प्यारी ईवा, मदर सुपीरियर और सिस्टरों का स्नेह-भाव, सेवा-भाव और नम्रता देख कर हृदय उनके प्रति श्रद्धा से भर जाता है। सचमुच उनका जीवन धन्य है।

: २ :

दस बजे रात का समय है। कुमुद अपने कमरे में मेज के सामने एक कुर्सी पर बैठी है। लैम्प जल रहा है। सामने एक पत्र खुला पड़ा है। वह उसकी माता के नाम मामा का भेजा पत्र है। मामा ने लिखा है कि उनका पुत्र बालकृष्ण बी० ए० आनर्स में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ है और अगले महीने काश्मीर चला जायेगा जहाँ उसे एक नौकरी मिलने वाली है। मामा ने इच्छा प्रकट की है कि काश्मीर जाने के

पहले ही बालकृष्ण और कुमुद का विवाह[1] हो जाय।

स्कूली जीवन समाप्त कर के कालेज में दाखिल हुए कुमुद के लिये मुश्किल से तीन महीने गुजरे थे। इसके पहले कभी कोई ऐसी समस्या उसके सामने उपस्थित नहीं हुई थी जिसके लिये उसे माथापच्ची करनी पड़ी हो। मामा के पत्र ने आज उसे चिन्ताकुल बना दिया।

कुमुद को मालूम था कि उसका विवाह एक दिन बालकृष्ण के साथ होने वाला है। मामा और माता के बीच वर्षों पहले से यह विचार तय है। बालकृष्ण मद्रास से, जहाँ उसके पिता अपनी सरकारी नौकरी के कारण रहते हैं, बीच-बीच में आता रहा है। कुमुद का ख्याल है कि विवाह जीवन-क्रम की एक अपरिहार्य रस्म है और उसे भी एक दिन उससे गुजरना होगा। समाज में साधारणतः लड़कियों पर मामा के लड़कों का ही पहला हक माना जाता है, यह भी वह जानती है। बालकृष्ण के साथ उसके विवाह की बात उसके लिये कोई नई बात नहीं है। फिर भी, आज मामा का पत्र पढ़ कर उसके मन में एक संघर्ष पैदा हो गया।

जब से देवेन्द्र लीला के शिक्षक के रूप में उसके यहाँ आकर रहने लगा, तब से कुमुद अपने हृदय में एक नई खुशी का अनुभव करने लगी थी। देवेन्द्र सिर्फ एक शिक्षक नहीं रहा। वह घर का एक अंग जैसा हो गया था। पार्वती अम्माँ उस पर बहुत विश्वास करती थीं और अनेक बातों में वह उनकी मदद करता था। स्वभाव में मधुर, बुद्धि में प्रखर, व्यवहार में विनम्र और सेवा में तत्पर, देवेन्द्र घर में सबों का प्रीति-भाजन बन गया। वह फाटक के पास वाले कमरे में रहता, और लीला को पढ़ाने के लिए, या नाश्ते और भोजन के लिए, या जब पार्वती अम्माँ उसे बुलातीं, तब बड़े घर में जाता।

---

(१) दक्षिण भारत में भाई और बहन की सन्तान के बीच विवाह सम्बन्ध स्थापित करने का आम रिवाज है।

कुमुद को बहुत कम मौका मिला था जब कि देवेन्द्र के साथ एकान्त में बातें की हों। तो भी उसके मानस चक्षुओं के सामने देवेन्द्र का चित्र प्रायः हाज़िर रहता। जब देवेन्द्र लीला को पढ़ाने या भोजन आदि के लिए जाता, तब कुमुद किसी न किसी बहाने जरूर उसके सामने आ जाती, और दो एक बातें कर लेती। उसे देवेन्द्र के बारे में कुछ सोचते रहने में एक आनन्द आता था। धीरे-धीरे देवेन्द्र उसके प्रिय चिन्तन का विषय बन गया। अब वह देवेन्द्र के साथ जरा ज्यादा आजादी के साथ बातें भी करने लगी थी।

मामा के पत्र ने उसे एक गहरी चिन्ता में डाल दिया। उसके मन के सामने दो चित्र बारी-बारी से आने लगे। एक था बालकृष्ण का, जिसके साथ उसका विवाह होना पहले ही से तय था, और दूसरा था देवेन्द्र का, जो उसकी छोटी बहन को पढ़ाने के लिए उसके घर में एक शिक्षक के तौर पर आया हुआ था।

बालकृष्ण का रूप कुमुद के मन के सामने आता, लेकिन ज्यादा देर तक टिकता नहीं। वह देवेन्द्र के बारे में उसके आने के दिन से अब तक की सारी बातों को याद करती और उनमें एक मधुरता का अनुभव करती। देवेन्द्र की मितभाषिता, उसके गम्भीर मुखमण्डल पर कभी-कभी फूट पड़ने वाली मन्द मुस्कान, उसका बातें करने का ढंग, उसका व्यक्तित्व—सब कुमुद को मोहक जान पड़ता।...सोचती, क्या देवेन्द्र से दूर चला जाना पड़ेगा ? कितना दर्दनाक ख्याल है ?

इसी तरह के विचारों में डूबती उतराती कुमुद थक कर अपना सिर खुले पत्र पर रखकर सो गई।

कमरे में इतनी देर तक रोशनी देखकर पार्वती अम्माँ दर्वाजा खोलकर अन्दर आयीं। कुमुद जग गई।

"खाट पर क्यों नहीं सो जाती ?"

"सो जाऊँगी। ऐसे ही आँख लग गई।"

"मामा का पत्र पढ़ा न ? उन्हें कल उत्तर भेज देना है। तुम्हारा क्या विचार है ?"

"मेरा ? मैं क्या कहूँ, माँ ? मैंने तो विवाह के बारे में कुछ सोचा ही नहीं है। मुझे अभी अपनी पढ़ाई की ही चिन्ता है।"

"विवाह के बाद भी तो पढाई जारी रख सकती हो। मामा की भी इच्छा है कि तुम्हारी पढ़ाई बन्द नहीं होनी चाहिये।"

"नहीं माँ, इतनी जल्दी क्या है ? लिख दो कि इतनी जल्दी करने की आवश्यकता नहीं है।"

पार्वती अम्माँ कुछ देर सोचती रहीं। मन में कहा, "आखिर लड़की की अभी उम्र ही कितनी है ? अगर वह अभी नहीं चाहती तो अगले साल ही हो।" वह बोलीं—"तुम चाहती हो कि अभी स्थगित कर दिया जाय तो ऐसा ही लिख दूँगी। बालन (बालकृष्ण) अगले साल जब छुट्टी पर आयेगा तब देखा जायेगा।"

माँ के चले जाने के बाद कुमुद ने एक लंबी साँस ली, दर्वाजा बन्द किया, लैंप बुझाया और खाट पर जा पड़ी।

: ४ :

कुमुद अपने मन में प्रायः बालकृष्ण की देवेन्द्र से तुलना करती। वह देवेन्द्र से देखने में कम सुन्दर नहीं है। उसके मामा का ही पुत्र है। देवेन्द्र कौन है ? कुछ दिनों का मेहमान। पर अम्माँ उसको कितना मानती हैं ! ओह, यदि.........।

बालकृष्ण के साथ उसका विवाह होने के बारे में, मामा का पत्र आने के बाद उसके दिल में एक हलचल पैदा हो गयी। उसका मन जोरों से देवेन्द्र की ओर दौड़ने लगा। उस पत्र ने उसके हृदय में, देवेन्द्र के प्रति सहज भाव से उत्पन्न एक छोटी चिनगारी को, एक ज्वाला

में परिणत कर दिया ; एक बिन्दु को सिन्धु का रूप दे दिया ; और एक उद्विग्नता मिश्रित मुग्धता की तरंग से उसका हृदय परिप्लावित कर दिया। यह उसके लिए एक नई अनुभूति थी। इसमें आत्मविस्मृत बनाने की शक्ति थी। इस तरह उसके दिन बीतने लगे।

× × ×

पार्वती अम्माँ को कुछ दिनों से बराबर बुखार रहने लगा है। डाक्टर ने रोगी की, खूब सावधानी से, सेवा-शुश्रूषा करने की हिदायत दी है।

कुमुद और देवेन्द्र, रात-दिन उनकी सेवा में व्यस्त रहने लगे। देवेन्द्र इस कोशिश में रहता कि कुमुद अधिक परिश्रम से बच जाय। उधर कुमुद सोचती, देवेन्द्र पर बहुत मिहनत पड़ रही है। एक दिन उसने कहा, "आप बिलकुल आराम नहीं ले रहे हैं। यह ठीक नहीं है।"

"मैं जरूरी आराम तो कर ही लेता हूँ। मेरे लिए यह काफी है। लेकिन तुम्हारा बिलकुल दुरुस्त रहना जरूरी है।"

कुमुद ने इसका कुछ जवाब नहीं दिया। पर देवेन्द्र के ये शब्द उसके कान को बहुत सुखद लगे। उसने सोचा, 'देवेन्द्र को मेरा कितना ख्याल है!'

एक दिन अपनी रोग-शय्या से पार्वती अम्माँ ने कुमुद से कहा, "बेटी, देवेन्द्र बहुत परिश्रम कर रहा है। उसके आराम का पूरा ध्यान रखना। गोपालन यहाँ रहता, तो क्या इससे ज्यादा मेरी सेवा करता?"

"पूर्व जन्म में आपके पुत्र ही रहे होंगे", कुमुद ने कहा।

"ऐसा पुत्र पाकर कौन माँ अपने को बड़भागी नहीं समझेगी? देखो बेटी, उसे बीच-बीच में अपने कमरे में जाने-आने में काफी तकलीफ होती होगी। क्यों न गोपालन के कमरे में ही उसके रहने का इन्तजाम कर दो?"

कुमुद ने बड़े हर्ष के साथ माँ की इच्छा का पालन किया। वह कमरा बाहर के बरामदे में एक सिरे पर था। विलायत जाने से पहले गोपालन उसी में अध्ययन किया करता था। कुमुद ने उसकी पूरी सफाई करके उसमें मेज, कुर्सी, खाट सब यथा स्थान रख दिये। मेज पर साफ मेज-पोश डाल दिया, फूलदान में फूल रख दिये, खिड़कियों पर पर्दे टाँग दिये।

लीला के भी उत्साह का ठिकाना नहीं था। उसने दौड़-दौड़ कर देवेन्द्र की पुस्तकें ढोकर लाने में मदद की। देवेन्द्र अपने नये कमरे में आ गया। ऐसा लगा, उस परिवार के साथ उसका सम्बन्ध और भी गहरा हो गया।

× × ×

पार्वती अम्माँ धीरे-धीरे स्वस्थ होने लगीं। अब वे बाहर के बरामदे में आकर बैठने लगीं। एक दिन बातें करते-करते उन्होंने कहा कि "क्यों न तुम लोग शाम को थोड़ा बैडमिण्टन खेला करो ?"

"आपका प्रस्ताव बहुत अच्छा है माँ," देवेन्द्र ने कहा।

"कोर्ट साफ करा लो, कुमुद ! तुम लोग तीन हो ही। सरला को भी बुला लेना। रोज थोड़ा खेलना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होगा।"

कुमुद ने गोपालन के समय का बनवाया कोर्ट साफ कराकर सब इन्तजाम कर दिया। गेंद और रैकेट भी मंगवा लिए। देवेन्द्र के साथ कुछ समय खेलने का मौका मिलेगा, यह ख्याल कुमुद की विशेष प्रसन्नता का कारण था। रोज शाम को खेल होने लगा। सरला भी खेल में शामिल होने लगी।

लेकिन बैडमिण्टन खेल ने कुमुद के लिये एक नई अशान्ति का कारण पैदा कर दिया। उसे ऐसा लगने लगा कि जब सरला रहती है तब देवेन्द्र बहुत उमंग में रहता, उसके मुँह पर और आँखों में एक

ज्योति छिटकती-सी मालूम होती ; लेकिन जब वह नहीं रहती, तब देवेन्द्र गम्भीर हो जाता है और कुछ भूला-भूला सा मालूम पड़ने लगता है। कुमुद बेचैन हो उठी।

जब से देवेन्द्र गोपालन के कमरे में आया, कुमुद को सन्देह होने लगा कि देवेन्द्र उससे खिंचा-खिंचा-सा रहता है। कहाँ तो उसने आशा की थी, एक मकान में रहने से, उससे पहले से अधिक बातें करने और थोड़ा समय साथ-साथ बिताने की सुविधा मिलेगी ; और कहाँ अब, उसे अपने से और भी दूर पाने लगी। देवेन्द्र कुमुद से पहले की अपेक्षा अब कम बोलता। उसके व्यवहार में पहले ही जैसी आत्मीयता और आदर का भाव तो था, लेकिन अब वह अधिकतर मौन रहता था। और कुमुद के साथ कम-से-कम समय में, कम-से-कम शब्दों में, काम की बातें कर के छुट्टी पा जाना चाहता था।

कुमुद सोचती, क्या देवेन्द्र के हृदय में उसके लिये स्थान नहीं है ? वह तो उसके ध्यान में हमेशा डूबी रहती, उससे दो बातें करने और उसकी दो बातें सुनने के लिये तरसती रहती है। लेकिन देवेन्द्र को उसकी जरा भी परवाह नहीं। वह अपने कमरे में बैठे-बैठे अपनी पुस्तकों में आँखें गड़ाये रहता, या लीला को पढ़ाता, या अम्मा से काम-काज की बातें करता है और शाम को सरला की तरफ चला जाता है। उसकी तरफ आँख उठा कर देखता तक नहीं। मानों वह कोई थी ही नहीं।

जब उसके मन में यह ख्याल पैदा होता कि उसका विवाह तो बालकृष्ण से पक्का हो गया है, तब वह झुँझला उठती। यह कहाँ का न्याय है कि माँ-बाप अपनी लड़कियों का विवाह, उनकी इच्छा जाने बिना ही, अपनी पसन्द से निश्चित कर दिया करें, और लड़के लड़कियों को उसे मानना पड़े।

फिर, वह देवेन्द्र की रुखाई की बात सोचती, और अपने मन में प्रश्न करती, कि क्या यह सरला के कारण ही तो नहीं है ! सरला भी तो

उसके सामने बहुत प्रसन्न मालूम होती है। पर क्या वह देवेन्द्र को उससे अधिक प्यार करती होगी ? इस तरह कुमुद एक आन्तरिक द्वन्द्व से हो कर गुजरने लगी।

× × ×

वह अपनी व्यथा किससे कहे ! किसके सामने अपना दिल खोल-कर रखे ? किससे सहायता मांगे ? सरला से ? असम्भव। देवेन्द्र से ? हो नहीं सकता। तब माँ से ही क्यों नहीं कह दे कि वह बालकृष्ण से प्रेम नहीं करती। उससे विवाह नहीं करेगी।...क्या माँ को यह जानकर दुख होगा ? पर अपनी माँ से नहीं कहेगी तो किससे कहेगी ?

× × ×

देवेन्द्र की रुखाई से दुखित रहते हुए भी ; कुमुद निरुत्साहित नहीं हुई। वह देवेन्द्र पर अपना हृदय खो चुकी थी।

: ५ :

एक दिन ईवा सरला के साथ कुमुद के घर आई। कुमुद और पार्वती अम्माँ ने दोनों का प्रेम से स्वागत किया। पार्वती अम्माँ ने छोटी बच्ची के बारे में ईवा से पूछा। ईवा ने कहा, वह तो सबों के हाथ का खिलौना हो गई है। कुछ-कुछ बोलने लगी है। उस की हँसी बहुत मनोहारी होती है। मुझे पास में पाकर वह मेरी ही गोद में रहना चाहती है। उसका मुझको "माँ" कहना बड़ा प्रिय लगता है। मेरे लिये, वह एक बड़े आनन्द का कारण हो गई है।

सरला—लेकिन फोड़े-फुँसी तो उसे छोड़ते ही नहीं।

ईवा—सो तो है। बराबर डाक्टर देख कर दवा देते रहते हैं।

पार्वती अम्मा—नीरोग माता-पिता की सन्तान ही नीरोग होती है। पैतृक रोग लेकर पैदा होने वाले बच्चे साधारणतः कमजोर और

निस्तेज हुआ करते हैं। उन्हें हमेशा कुछ-न-कुछ शिकायतें होती रहती हैं।

पार्वती अम्मा तीनों सहेलियों को बातें करने के लिये छोड़ कर, नौकर को कुछ निर्देश देने चली गईं।

सरला ने कहा, "अंजिला तो उन अनगिनत निर्दोष बच्चों में से एक है, जो समाज के पाप का फल भोगने के लिये पैदा होते हैं; और जो रोग-शोक से पीड़ित हो दर-दर मारे-मारे फिरने के लिये छोड़ दिये जाते हैं।"

ईवा—पर उपाय क्या है ? जब तक पुरुषवर्ग का स्त्रियों के प्रति रुख नहीं बदलता और सरकार कोई इन्तज़ाम नहीं करती तब तक तो यही हाल रहेगा। उन्हें सुधारने और जीवन में आत्म-सम्मान-पूर्वक रहने की, थोड़ी शिक्षा देने का काम हम कर सकते हैं। इस से ज्यादा तो हमारे वश की बात नहीं है।

सरला—मेरा तो ऐसा ख्याल है कि जब तक स्त्री-जाति अज्ञान में पड़ी रहेगी, उत्कृष्ट मानव जीवन की कल्पना से वंचित रहेगी, विचार और विवेक पूर्वक अपना जीवन बिताने की उसे स्वतंत्रता न होगी तब तक समाज का यही हाल रहेगा।

नौकर केटिल में कॉफी और नाश्ते का सामान लेकर आया और रख कर चला गया। कुमुद ने ईवा और सरला के सामने कप-सासर रख कर उसमें काफी उँडेल दी।

कॉफी लेते-लेते ईवा ने कहा, 'यह जीवन ही पाप का फल है। प्रार्थना और सेवा से इस जीवन से मुक्त हो कर, प्रभु में लीन हो जाने में ही कल्याण है।

सरला—ईवा, ईसाई समाज में सेवा की जो भावना पाई जाती है, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिलती। दीन-दुखी, अनाथ, रोगी-कोढ़ी—जैसे लोगों की सेवा का कार्य जितनी श्रद्धा के साथ ईसाई स्त्री-पुरुष करते हैं, उतनी श्रद्धा का प्रमाण दूसरों में नहीं पाया जाता।

कुमुद—वे मानसिक शिक्षा देने के साथ-साथ स्वावलम्बी बनाने वाली शिक्षा पर भी विशेष ध्यान देते हैं। खास कर स्त्रियों के लिये किया जाने वाला उनका काम, समाज के सुधार और कल्याण की दृष्टि से बहुत महत्व रखता है।

सरला—यह सचमुच आश्चर्य की बात है कि मनुष्य का विवेक और अन्तःकरण समाज में प्रचलित दुर्नीतियों को कैसे चुपचाप सहन करता है। मुझे ऐसा लगता है कि जब तक स्त्रियां स्वयं आगे बढ़ कर, इन समस्याओं को हल करनेमें अपने को नहीं लगायेंगी, तब तक हालत नहीं सुधर सकती।

ईवा—एक बात कहूँ, सरला ! मेरे माता-पिता और मदर सुपीरियर के अलावा अभी कोई और इसे नहीं जानता। मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं भी, एक सिस्टर बनूँगी और सेवा कार्य में ही अपना जीवन लगाऊँगी।

कुमुद—माता-पिता से तुम्हें इसके लिये स्वीकृति मिल गई है ?

ईवा—मेरे माता-पिता मेरे विचार से सहमत नहीं हैं। उन्होंने तो मेरे विवाह के लिये कई साल पहले ही से एक व्यक्ति ढूँढ़ रखा है। लेकिन मैंने उनसे कह दिया है कि मैं शादी नहीं करूँगी।

कुमुद—क्या शादी कर के तुम अपनी इच्छानुसार काम नहीं कर सकती ?

ईवा—शादी और सेवा दोनों गाड़ियां एक साथ चलाना आसान नहीं है। शादी करके घर बसाने और बाल बच्चों के सम्भालने के फेर में पड़ने के साथ-साथ पूरा समय सेवा कार्य में कैसे दिया जा सकता है ?

सरला—तुम्हारा विचार बड़ा उत्तम है, ईवा। क्या स्त्रियों के लिये विवाह से बढ़ कर कोई उच्च ध्येय नहीं हो सकता ?

दूसरा भाग

: १ :

अपने निश्चय के अनुसार कुमुद माँ से अपने हृदय की बात नहीं कह सकी। उसने देवेन्द्र को अधिक गहराई से समझने की कोशिश की। देवेन्द्र को उसके घर में आये करीब ३ साल हो रहे थे। लेकिन इस अर्से में उसे कोई ऐसा अवसर, कोई ऐसी घटना स्मरण नहीं आई; जिससे वह निश्चयपूर्वक कह सके कि देवेन्द्र के हृदय में उसके प्रति कुछ विशेष अनुरक्ति है।

देवेन्द्र का स्नेहपूर्ण स्वभाव, सब को प्रसन्न रखने का उसका गुण, यह सब वह अच्छी तरह जानती थी। पर इससे उसे सन्तोष नहीं हुआ। वह तो जानना चाहती थी कि जिस तरंग से उसका हृदय उद्वेलित हो उठा है और देवेन्द्र में तल्लीन हो जाने के लिये अधीर हो रहा है, वह देवेन्द्र के हृदय में भी पैदा हुई है या नहीं।

देवेन्द्र को अपने से दूर दूर पाने के बावजूद, कुमुद के दिल में एक छिपी आशा थी कि शायद, देवेन्द्र अपने असली भाव को छिपाये रहता है, जो एक दिन प्रकट हो ही जायेगा। लेकिन धीरे-धीरे उसकी वह आशा कमजोर होती गई।

सरला की तरफ देवेन्द्र का झुकाव देखकर उसकी धारणा पक्की हो गई कि देवेन्द्र का दिल सरला पर निछावर है। वह सोचती, अगर सरला से देवेन्द्र का परिचय नहीं हुआ होता, तो क्या होता? उसे सरला पर, देवेन्द्र पर और अपने पर गुस्सा आता। फिर कहती, आखिर उनका क्या दोष है!

× × ×

कुमुद समझने लगी है कि प्रेम जबर्दस्ती की चीज नहीं है, न वह किसी तर्क के मार्ग पर चलता है। पानी जैसे अपनी सतह ढूंढ लेता है, वैसे ही प्रेम भी अपना पात्र ढूंढ लेता है। पानी और प्रेम की धारा को अनुशासित नहीं किया जा सकता।

कुमुद ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि वह देवेन्द्र से प्रेम की भिक्षा नहीं मांगेगी। साथ ही वह उसके सुख में बाधक भी नहीं बनेगी। ...वह देवेन्द्र से घृणा भी नहीं कर सकती। उसे भुला भी नहीं सकती। क्योंकि उसी के कारण उसे उस सौन्दर्य का दर्शन हुआ जिससे उसकी हृत्तन्त्री झंकृत हो उठी। ...उसने निश्चय किया कि उसके लिये यही उत्तम होगा कि वह अपनी वेदना अपने हृदय के अन्तस्तल में छिपाये, इस जीवन की दौड़धूप से एक दिन चुपचाप निकल जाय।

× × ×

उसने सोचा, माँ और मामा को मालूम हो जाय कि मैं बालकृष्ण से प्रेम नहीं करती, तो उन्हें कितना दुःख होगा? और स्वयं बालकृष्ण का क्या होगा? ...नहीं, माँ की ही इच्छा पूर्ण हो। जिस दिन उन्होंने बालकृष्ण के साथ मेरे विवाह की बात पक्की की, उसी दिन मेरे भाग्य पर मुहर लग गई। मेरे लिये उनके निर्णय के सामने सिर झुकाना ही उत्तम होगा।

× × ×

बालकृष्ण के साथ कुमुद के विवाह का दिन निश्चित हो गया। देवेन्द्र ने बड़े हर्ष और उत्साह से पार्वती अम्माँ की इच्छा के अनुसार विवाह का सारा प्रबन्ध किया। कुमुद उन दिनों अपने कमरे से नहीं निकलती थी। लोगों ने समझा कि कुमारी लड़कियों को, अपने विवाह की बात से, जो एक सहज लज्जा का अनुभव होता है, वही उसका कारण है।

विवाह मंडप केले के थम और नारियल के कोमल पीत वर्ण और आम के हरे पत्तों के तोरणों तथा फूलों से सजाया गया।

मंडप के एक भाग में पुरुष और दूसरे भाग में स्त्रियाँ आ-आकर बैठ गईं। मध्य वयस्क महिलाएँ ज़री किनारे की लुंगी, चोली और अंगवस्त्र तथा पुराने ढंग के कर्णफूल धारण किये हुए थीं। नवयुवतियाँ अधिकतर रंगबिरंगी रेशमी साड़ियाँ पहने थीं। हीरा, मोती, पुष्यराग आदि रत्नजटित नये फैशन के लटकन, हार और सोने के कंकण उनकी शोभा और सौन्दर्य बढ़ा रहे थे। सबके जूड़ों में सुन्दर ढंग से बंधी नवविकसित बेली मालाओं और गुलाब के फूलों से सारे मंडप में एक खुशनुमा सुगन्ध और मोहकता छा रही थी। संगीत कचहरी चल रही थी।

जब बारात फाटक पर पहुँची, तब वधू की छोटी बहन ने वर की अष्ट मांगल्य की आरती उतारी और उसका पाद प्रक्षालन किया।

जैसे ही वधू ने अपनी मामी, माधवी अम्माँ और अन्य सम्बन्धियों के साथ मंडप में प्रवेश किया, वैसे ही स्त्रियों की 'वाकिला'[1] ध्वनि गूंज उठी।

वेदी के पास वधु-वर पास पास बिठा दिये गये। सामने एक बड़ा दीप जल रहा था। उसकी एक तरफ एक 'परा'[2] में धान और दूसरी तरफ "इटङ्ली"[3] में अलवा चावल रखा था। दीप के अग्रभाग में गणपति का प्रसाद—धान का लावा, चूड़ा, गुड़, केला वगैरह एक थाल में सजाकर रखा था। अष्टगन्ध और अगरबत्ती की सुगन्ध से सारा मंडप सुरभित हो रहा था।

---

१ शुभ अवसरों पर स्त्रियों की विशेष मंगल सूचक ध्वनि।

२ परा—लकड़ी की बनी एक पसेरी की नाप।

३ इटङ्ली—एक सेर की नाप।

पुरोहित ने यथाविधि होमादि कृत्य किये, तब मामी ने बेली फूल की एक एक माला कुमुद और बालकृष्ण के हाथ में दे दी और उन्होंने एक दूसरे के गले में डाल दी। उसके बाद वर ने वधू को वस्त्र भेंट किया। मंडप में फिर "वाकिला" और उसके साथ-साथ "आर्प"[१] ध्वनि हुई। इस तरह कुमुद और बालकृष्ण का विवाह सम्पन्न हो गया। बन्धु-बान्धव और इष्ट मित्रों ने वधू-वर पर फूलों की वर्षा की और आशीर्वाद दिये। कुछ मित्रों ने शुभकामनाओं और बधाइयों की कवितायें भी सुनाईं। गुलाबपाश से सब पर गुलाब जल छिड़का गया। फूल और नींबू का वितरण हुआ। कलमदान से 'कलभ'[२] लेकर लोगों ने ललाट और हाथों में उसका लेप किया। सारा विवाह कर्म एक घण्टे के भीतर समाप्त हो गया।

उसके बाद भोज की बारी आई। केले के लम्बे-लम्बे पत्ते[३] पहले ही से फैलाकर कतारों में रखे थे। उनपर तरह-तरह की भाजियाँ, अचार, चटनी, पापड़, रायता, उप्पेरी[४], अप्पम[५], बड़ा, तिल के लड्डू और केले अर्थात् षट्रस के सब भोज्य पदार्थ तरतीब से रखे थे। अतिथियों के आकर बैठते ही भात, साम्बार[६], कालन[७], रसम[८] और छाछ तथा दही

---

१ आर्प ध्वनि—पुरुषों की विशेष मंगल सूचक ध्वनि।

२ 'कलभ'—सुगन्धित बनाया हुआ पानीदार चन्दन।

३ दक्षिण भारत में पत्ते पर भोजन करना उत्तम माना जाता है। केले के पत्ते को काम में लाते समय, इसे काटने और रखने के सम्बन्ध में कुछ खास नियमों का पालन किया जाता है।

४ उप्पेरी—एक खास जाति के केले की तली कतरन।

५ अप्पम—चावल के आटे का पूआ।

६ साम्बार—मसालेदार दाल।

७ कालन—कढ़ी।

८ रसम—इमली या नींबू से बनाया हुआ मसालेदार रस।

बारी-बारी से परसे गये। अन्त में कई तरह की खीर परसी गई। भोज के उपरान्त, पान ले ले कर अतिथिगण सानन्द विदा हुये।

: २ :

विवाह के बाद बालकृष्ण को छोड़ कर बाकी सब लौट गये। एक सप्ताह कुमुद के साथ रहने के बाद मद्रास होते हुए काश्मीर लौटने का उसका कार्यक्रम था। एक दिन कुमुद के साथ बैठे वह बातें कर रहा था।

"काश्मीर बड़ा सुन्दर देश है। हजारों यात्री प्रति वर्ष वहाँ के मनोहारी दृश्य देखने और झीलों में नौका-गृह का आनन्द लेने जाते हैं। कालेज की अगली छुट्टियों में तुम भी काश्मीर चलना।"

"क्यों, अभी क्यों नहीं ले चलते ?"

"मेरे लिए इससे बढ़कर क्या खुशी हो सकती है ! लेकिन तुम अपनी पढ़ाई छोड़कर चलोगी ?"

"मेरा अब पढ़ाई जारी रखने का मन नहीं है।"

बालकृष्ण ने हर्षित होकर कहा, "तब मैं माँ से कहे देता हूँ कि तुम मेरे साथ जाओगी। और पिताजी को भी लिखे देता हूँ।"

पार्वती अम्माँ ने जब यह सुना, तब कहा कि कुमुद तो बी० ए० तक पढ़ना चाहती थी। अभी तो इण्टर भी पूरा नहीं हुआ है। कैसे एकाएक अपना विचार बदल लिया है ?"

बालकृष्ण ने कहा, "कहती है बी० ए० पास करके क्या करना है ? अब आगे कालेज जाना नहीं चाहती।......काश्मीर जाने से उसका स्वास्थ्य सुधर जायगा।"

पार्वती अम्माँ ने, अनिच्छापूर्वक ही सही, दोनों को जाने की अनुमति दे दी। रवाना होने का दिन भी आ पहुँचा। कुमुद ने अपनी सहेलियों

और सम्बन्धियों से एक-एक करके विदा ली। सखी-सहेली, बन्धु-बान्धव, माँ-बहन सभी को छोड़कर जाना होगा, इस ख्याल से कुमुद बहुत दुःखी हो रही थी। जब वह सरला से विदा होने लगी, तब एकान्त में बैठकर दोनों बहुत देर तक बातें करती रहीं। बचपन का संग, साथ-साथ खेलना, पढ़ना-लिखना सब छूट रहा था। दोनों की आँखों में आँसू भर आये। वे कितने सालों के गहरे स्नेह और मित्रता के द्योतक थे! दोनों ने देवेन्द्र के बारे में भी बातें कीं। देवेन्द्र, कुमुद और सरला की बातचीत का एक सामान्य, प्रिय विषय रहा है। वह कैसे एक अनजान की तरह आया, कैसे सब के दिल में अपना एक निश्चित स्थान बना लिया। पार्वती अम्माँ को तो मानों उनका खोया गोपालन ही मिल गया। सरला के माता-पिता भी उसे कम नहीं मानते। उसने सभी के हृदयों को वशीभूत कर लिया था।

सरला ने कहा, "तुम तो कहा करती थी कि बी० ए० खतम होने तक नहीं जाऊँगी। बालकृष्ण ने क्या जादू कर दिया कि तुम्हारे सब निश्चय बदल गये?"

कुमुद ने अपने भावों को रोकने की कोशिश करते हुए कहा, "माँ और लीला को बहुत बुरा लगेगा। उन्हें देखना! देवेन्द्र को भी तुम्हारे जिम्मे छोड़े जाती हूँ।"

× × ×

विवाह के कई दिन पहले ही से कुमुद और देवेन्द्र में कोई बातचीत नहीं हुई थी। उसका कारण देवेन्द्र की कार्य व्यस्तता और समय का अभाव ही नहीं था। कुमुद की भी कोशिश थी कि वह उसके रास्ते में न पड़े।

जिस दिन शाम की गाड़ी से उसे बालकृष्ण के साथ जाना था, उस दिन कुमुद देवेन्द्र के कमरे में गई। देवेन्द्र कुमुद के लिए कुर्सी छोड़कर स्वयं खाट पर बैठ गया। कुमुद के बैठ जाने के बाद देवेन्द्र ने कहा,

"तुम्हारे चले जाने पर यहाँ कितना सूना-सूना लगेगा, कुमुद ! मैं सच कहता हूँ, तुम्हारी अनुपस्थिति हम सभी को बहुत अखरेगी।"

"मैं यही कहने आई हूँ कि अम्माँ और लीला का ख्याल रखियेगा। मुझे तो जाना ही है।......सब साथ ही रहते तो कितना अच्छा होता !......पर...भाग्य में हो तब तो.........।"

कुमुद आगे नहीं बोल सकी। उसकी आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। देवेन्द्र की भी आँखें भर आईं। उसने कुमुद का हाथ अपने दोनों हाथों में ले लिया और कहा,

"कुमुद, तुम लोगों ने मुझे अपना कर जो सुख मुझे दिया है, उस का बदला मैं इस जीवन में नहीं चुका सकता। इस जीवन में क्या है, जो मैं तुम्हारे लिए, लीला के लिए और अम्माँ के लिए करना नहीं चाहूँगा ?"

"मैं जानती हूँ और वही मेरी तसल्ली का कारण है। भैया के नहीं लौटने से अम्माँ को खास कर जो सदमा पहुँचा था, वह आपके कारण बहुत कुछ कम हो गया है। लीला तो समझती ही नहीं कि आप हमारे बड़े भाई नहीं हैं।...मैं जहाँ भी जाऊँ, यहाँ की स्मृतियाँ अपने साथ लेती जाऊँगी और उन्हीं से मुझे बल और धैर्य प्राप्त होगा।"

"कुमुद, तुम कहीं भी रहो, एक भाई का गहरा स्नेह और शुभ-कामनायें सदा तुम्हारे साथ रहेंगी और वह हमेशा तुम्हें याद रखेगा।"

मैं आपके मुँह से यही सुनना चाहती थी। अब इसी विश्वास से मुझे शान्ति मिलेगी। मैंने तो आपको अपने से भिन्न कभी माना ही नहीं।"

इतना कहकर कुमुद ने देवेन्द्र को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और सजल आँखें लिए कमरे से निकल गई।

× × ×

कुमुद और बालकृष्ण को विदा करने के लिए स्टेशन पर सरला, देवेन्द्र, लीला और अन्य कई मित्र आये। पार्वती अम्माँ ने अपने आँसू रोकते हुए घर से ही दोनों को आशीर्वाद के साथ विदाई दे दी थी। कुमुद की आँखों से झर-झर आँसू गिर रहे थे।

गाड़ी के पहुँचते ही बालकृष्ण सबों से हाथ मिलाकर, प्रणाम करके गाड़ी पर चढ़ गया और डब्बे में सब सामान रखने लगा।

कुमुद ने भी सब से विदा ली। लीला की ठुड्डी पकड़ कर हिलाई और उसे चूम लिया। अन्त में देवेन्द्र की तरफ हाथ बढ़ाती हुई बोली, "भाग्य में होगा तो फिर दर्शन होंगे। अम्माँ से प्रणाम कहियेगा।"

देवेन्द्र ने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, "भगवान् तुम्हें सदा सुखी रखें।"

कुमुद गाड़ी में जा बैठी। इंजिन ने सीटी दी। उधर गाड़ी रवाना हुई, इधर देवेन्द्र के हृदय में यह आवाज उठी, "कुमुद कितनी प्यारी लड़की है। भगवान् उसे सुखी रखे।"

× × ×

मद्रास सेण्ट्रलस्टेशन पर नवदम्पति के स्वागतार्थ, बालकृष्ण के कितने ही मित्र फूलमालायें ले लेकर पहुंचे थे। सभी से मिल मिलाकर दोनों टैक्सी में सवार हो अपने घर, कीलपाक गये। बालकृष्ण की माँ कुमुद को अपनी पुत्रवधू के रूप में पाकर फूले न समाती थीं। उन्होंने बड़े प्रेम से उसका स्वागत किया।

× × ×

मद्रास से रवाना होने के दिन बालकृष्ण के पिता ने उन दोनों को सम्बोधित करके कहा, "याद रखना, प्रेम ही दाम्पत्य-सुख का आधार है। वह जीवन-नौका का पतवार है और उससे ही जीवन-संग्राम में आंधी और तूफान का सामना करने की शक्ति प्राप्त होती है, तुम दोनों सुखी परिवार बनाओ, यह हमारी शुभ कामना है।"

माता-पिता की शुभकामनायें और आशीर्वाद पाकर, कुमुद और बालकृष्ण अपनी अपनी आशायें और अपनी-अपनी भावनायें लेकर जीवन पथ पर आगे आगे बढ़े।

: ३ :

एक दिन सरला को मदर सुपीरियर का पत्र मिला कि ईस्टर के रविवार को ईवा "सिस्टर-हुड"[1] ग्रहण करेगी। उसकी बड़ी इच्छा है कि सरला उस अवसर पर उपस्थित हो। मदर सुपीरियर ने अपनी तरफ से भी सरला को आने के लिये निमंत्रित किया।

ईवा मैट्रिक खतम करके मदर सुपीरियर के प्रोत्साहन से सरला के साथ ही गवर्नमेंट कालेज में भर्ती हो गई थी। उसकी सिस्टर बनने की इच्छा जान कर, मदर सुपीरियर ने निश्चय किया था कि वह कुछ और अनुभव हो जाने के बाद ही ऐसा कदम उठावे।

कालेज में एक साल पूरा हो जाने के बाद, ईवा की प्रार्थना पर मदर ने उसे दस महीने की परीक्षण-अवधि पर रखने का निश्चय किया। आठ महीने का समय मामूली तरीके से कालेज की पढ़ाई के साथ कट गया। परीक्षण-अवधि के अन्तिम दो महीने कठोर संयम के थे। उन दिनों उसका कालेज जाना बन्द रहा। एक कमरे में अलग रह कर उसे तपस्या का जीवन बिताना पड़ा। न किसी से मिलना-जुलना, न बातें करना, न स्वादिष्ट भोजन, न आरामदेह बिछौना; मामूली भोजन, फर्श पर चटाई डाल कर सोना और प्रभु ईसा का नाम जपते हुए प्रार्थना में तल्लीन रहना, बस यही उन दिनों ईवा का काम था।

---

१ सिस्टरहुड—संन्यासिनी-व्रत। ईसाइयों में ईसामसीह की भक्ति में कुछ लड़कियाँ आजीवन कुमारी रहने का व्रत ग्रहण करती हैं।

ईवा जैसी सुकुमार लड़की के लिये ऐसा जीवन बिताना बहुत कष्ट-साध्य था, फिर भी उसने बड़ी निष्ठा और दृढ़ता से उस अवधि को पूरा किया। "ईस्टर सण्डे"[२] का पवित्र दिन ईवा के नये जीवन में पदार्पण करने के लिये निश्चित हुआ।

ईवा और सरला सहपाठिनी होने के साथ २ बड़ी मित्र भी थीं। सरला उत्सव में शामिल न हो, यह कैसे हो सकता था! उसने ईवा को भेंट देने के लिये, सूली पर लटकते हुए ईसा मसीह की हाथी दांत की एक प्रतिमा मंगाई। उसे सोने से मढ़वा कर और नीले रेशमी धागे में पिरोकर गले में पहनने योग्य बना दिया।

आखिर वह दिन भी आ गया। सरला अपना डिब्बा लिये ठीक समय पर कौनवेण्ट पहुँची। कौनवेण्ट का चैपल (मंदिर) ईस्टर के उत्सव के लिये खूब सजाया गया था। ईवा को विवाह वेदी पर जाने वाली वधू की तरह सजाया गया था। निर्मल, स्वच्छ रेशमी वस्त्र, आभूषण, फूलों का मुकुट, हाथ में फूलों का गुच्छा, इन सबों से अलंकृत वह एक स्वर्ग सुन्दरी की भाँति शोभ रही थी; छोटी-छोटी लड़कियाँ वधू के लटकते हुए वस्त्र के छोर को उठा कर पीछे-पीछे चलने के लिये तैयार खड़ी थीं।

जब मदर सुपीरियर आकर ईवा को चैपल में ले जाने लगीं, तब सब उनके पीछे कतार में चल पड़ीं। मंगल सूचक घंटियाँ बजने लगीं। सभी के दिल में खुशी की एक लहर दौड़ गई। लेकिन ईवा के माता-पिता की आँखें सजल थीं, यद्यपि वे भी मुस्कराने की कोशिश कर रहे थे।

चैपल में प्रवेश करने पर ईवा ने वेदी के सामने ईसा की प्रतिमा के आगे घुटने टेक दिये और प्रतिमा के चरणों में फूलों का गुच्छा रख

२ ईसा मसीह के कब्र से उठ कर स्वर्ग जाने का दिन।

कर सिर नवाया। उसके बाद उसने पुरोहित को, जो वेदी के पास खड़े थे, सिर नवाया और उनका आशीर्वाद लिया। पुरोहित ने ईवा के सिर पर हाथ रख कर ईसा की महिमा का वर्णन किया और अपना हाथ ईवा के सामने बढ़ा दिया। ईवा ने श्रद्धापूर्वक उनका हाथ लेकर अपनी आँखों से लगाया और चूम लिया। पुरोहित ने प्रार्थना का उपक्रम किया। सब लोग घुटने टेक कर प्रार्थना में शामिल हो गये। सरला ने भी अपना आदर प्रकट करने के लिये अपने घुटने टेक दिये।

प्रार्थना के बाद ईवा उठी और अपने सब अलंकार एक-एक कर के, अपने हाथ से उतार कर अपनी माँ के हाथ में दे दिये। माँ की दृष्टि जमीन की तरफ थी। आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। लेकिन ईवा के मुख पर एक दिव्य शान्ति और मन्द मुस्कान छिटक रही थी। माँ नीचे नजर किये ही पुत्री से हट कर अलग जा खड़ी हुई।

पुरोहित के आदेश पर ईवा ने सूली को उठा लिया और उसे हृदय से लगा कर, आँखें मूँदे, ध्यानावस्थित हो, खड़ी हो गई। पुरोहित ने उसके ऊपर दिव्य जल का छींटा डाला। तत्पश्चात् पुरोहित के निर्देशानुसार ईवा ने सूली को वेदी के सामने ज़मीन पर रख दिया और अपने खुले बालों को फैलाये उस पर लेट गई। चैपल का घण्टा टन, टन, टन-दीर्घ नाद के साथ शोक सूचक ध्वनि निकालता हुआ बजने लगा। चारों तरफ मृत्यु के समय जैसी एक निस्तब्धता छा गई। ईवा की आँखें मुँदी थीं, पर होठों पर आनन्द की मुद्रा अंकित थी। पुरोहित ने कफन का सफेद कपड़ा उठा कर, उससे ईवा को ढक दिया।

सबों की आँखें उस दृश्य को देख कर सजल हो गईं। शान्त और निर्विकार रहने की सबों की पूरी कोशिश होने पर भी सिसकियों की दबी आवाज वहाँ की गम्भीर निस्तब्धता को भंग करती हुई फूट पड़ी। ईवा की माँ को एक सिस्टर ने अनुरोधपूर्वक बाहर ले जा कर आराम कराया। सरला भी जीवन में मरण का यह दृश्य देख कर अपने आँसुओं को

रोकने में असमर्थ हो रही थी। लेकिन उसने बाहर जाने की अनिच्छा प्रकट करते हुए और अपने आंसू पोंछते हुए कहा, "नहीं, मैं सब देखना चाहती हूँ।"

मदर सुपीरियर ने पुरोहित के हाथ में एक कैंची दी। और पुरोहित ने ईवा के बाल काटने की धार्मिक विधि पूरी की। इसके साथ ईवा नामक व्यक्ति का अस्तित्व दुनिया में समाप्त मान लिया गया। कफन उठा दिया गया। पुरोहित ने ईसामसीह में विलीन हो कर नया जन्म लेने वाली व्यक्ति पर दिव्य जल का छींटा डाल कर उसे सिस्टर जोसेफीन नाम दिया[1]। मदर ने सिस्टर जोसेफीन को सूली पर से उठाया और उसे अपने कमरे में ले गई।

अपने कमरे में पहुँच कर मदर ने उसके सारे बाल काट दिये और उसे सिस्टरहुड की पोशाक पहना दी। अपनी नई पोशाक में प्रसन्न मुख सिस्टर जोसेफीन मदर के साथ फिर चैपल में आई। बाल ईसू के सामने घुटने टेक कर, हाथ जोड़े, मुग्ध भाव से कुछ क्षण बैठी रही। फिर उठ कर मदर का आशीर्वाद लिया और सब सिस्टरों से गले मिली।

वह सरला से मिलने आई, तो सरला ने अपना उपहार निकाल कर सिस्टर जोसेफीन के गले में डाल दिया। जोसेफीन ने धन्यवाद देते हुए कहा, "अब तो उपहार लेने का मेरा कोई अधिकार नहीं है। तुमने मेरे हृदय की सब से प्रिय वस्तु का प्रतीक भेंट किया है, सरला! इसे मैं मदर सुपीरियर के जिम्मे लगा दूँगी। यह सारे कौनवेण्ट की सम्पत्ति होगी और सब को आनन्दित करती रहेगी।"

---

१ सिस्टर हुड के पीछे यह कल्पना है कि कन्यायें प्रभु ईसा को अपने स्वामी के रूप में स्वीकार करती हैं। इसके लिये वे वधू के वेश में चैपल में जाती हैं और वहाँ लौकिक जीवन का त्याग कर आत्म-समर्पण पूर्वक मृत्यु की विधि से हो कर एक नया जीवन प्राप्त कर के उठती हैं।

मदर सुपीरियर पास में ही खड़ी थीं। बोलीं, "ठीक है, सिस्टर जोस, तुम्हारे ही गले में रहे तो कोई हर्ज नहीं है। सरला ने एक बहुत उपयुक्त भेंट दी है, मेरी बधाइयाँ।"

अल्पाहार और शर्बत का आयोजन था। अतिथि उसमें शरीक होने के बाद विदा हुए।

× × ×

सरला ने सवेरे कौनवेण्ट में जो कुछ देखा, उसके चिन्तन में दिन भर डूबी रही। माधवी अम्माँ ने पति से कहा, "मालूम होता है, सरला के दिल पर बहुत गहरा असर हुआ है। मैं तो नहीं चाहती थी कि वह ऐसा दृश्य देखने जाय, पर रोकना भी अच्छा नहीं लगा। इसलिये चुप रही।"

शंकर मेनोन—लड़कियाँ भावुक होती ही हैं। ठीक हो जायेगी। घबड़ाने की कोई बात नहीं है। जो देखा है उसका अच्छा असर ही पड़ेगा।"

"भगवान् करें, ऐसा ही हो," माधवी अम्माँ ने कहा।

× × ×

शाम को जब देवेन्द्र सरला के यहाँ आया, तब वह आराम कुर्सी पर लेटे-लेटे "सेंट मैगडलिन" (ईसाई धर्म की एक साध्वी का जीवन चरित्र) नाम की पुस्तक पढ़ रही थी।

देवेन्द्र ने पूछा, "क्यों सरला, तुम्हारी ईवा के सिस्टर बनने का कार्यक्रम कैसा रहा ?"

"आज से वह सिस्टर जोसफीन हो गई है। ओह ! सिस्टर बनने का वह दृश्य कभी भुलाया नहीं जा सकता।"

"चलो पार्क में घूम आवें। तुम बहुत उदास दीखती हो। इस तरह की पुस्तक पढ़ने से मन और भी उदास हो जायगा।"

सरला ने बाहर निकलने के लिए तैयार होती हुई कहा, "नहीं देवेन्द्र, इस पुस्तक को पढ़ने से एक प्रकार की शान्ति मिलती है। ईवा ने जिस

पवित्र जीवन में आज प्रवेश किया है, उसी की महिमा का इस में वर्णन है।"

"अच्छा, तो कहो, क्या देखा ?"

सरला ने सवेरे जो कुछ देखा था, उसका वर्णन देवेन्द्र को सुनाने के बाद अन्त में कहा, "बाल काट डालने और चौबीसों घण्टे काली पोशाक से सारे शरीर को ढके रहने का उनका जो नियम है, वह मेरी समझ में एक दण्ड है। ऐसे तो सिस्टरों के सेवा और भक्तिमय जीवन के लिए मेरे हृदय में बहुत श्रद्धा का भाव है। लेकिन सिस्टर बनने के लिए सूली पर सुलाना, कफन से ढकना और बाल काटना आदि क्यों आवश्यक होना चाहिये ?"

देवेन्द्र ने जवाब दिया, "जीवन में असली परिवर्तन तो हृदय परिवर्तन ही है। किन्तु फिर भी हर धर्म में कोई न कोई विधि रखी गई है। परिवर्तन की भावना को दृढ़ करना ही उसका उद्देश्य है।"

सरला—यह सब तो मेरी समझ में नहीं आता, किन्तु मुझे एक बात की खुशी है। ईवा ने एक आनन्द की भावना लेकर इस जीवन में प्रवेश किया है। सिस्टर बनने की उसकी कई सालों की इच्छा आज पूरी हो गई। इससे वह बहुत प्रसन्न है।

दोनों बातें करते हुए पार्क में पहुँच गये। और बेंच पर बैठकर कुछ समय के लिए अपने-अपने विचारों में डूब गये।

: ४ :

देवेन्द्र प्रथम श्रेणी में बी० ए० उत्तीर्ण हो गया। इससे पार्वती अम्माँ के हर्ष की सीमा न रही। देवेन्द्र तो नौकरी में लगकर और पैसा जोड़कर बाद में वकालत पढ़ने का विचार कर रहा था, किन्तु पार्वती अम्माँ उसकी पढ़ाई का व्यय स्वयं उठाने को तैयार हो गईं। उन्होंने कहा, "तुम्हारे लिए मैं कुछ कर सकूँ तो मुझे बहुत खुशी होगी।"

देवेन्द्र का गला कृतज्ञता से रुँध गया। उसे कुछ क्षणों तक उत्तर देने के लिए शब्द ही न सूझे। अन्त में उसने कहा, "अम्माँ, आपने मेरे लिए जो किया है उसका बदला मैं कैसे चुका सकता हूँ? आपके ऋण से मैं कभी मुक्त नहीं हो सकता। यह मेरा भाग्य ही है कि जन्म देने वाली माँ को मैंने खो दिया, तो इतना वात्सल्य और अनुग्रह प्रदान करने वाली आप जैसी माँ मुझे मिल गयीं। भगवान् करे, मैं आपकी कृपाओं का अपात्र साबित न होऊँ।"

पा. अ. "जन्म का सम्बन्ध ही सब कुछ नहीं है बेटा, भगवान् की लीला ही ऐसी है कि देखते-देखते अपने पराये हो जाते हैं और पराये अपने हो जाते हैं। .... तुमने मुझ दुःखी हृदय को अपनी सेवा और श्रद्धा से सुखी बनाया है। ऐसा क्या हो सकता है जो मैं अपनी कोख से जन्मे पुत्र के लिए कर सकती हूँ, पर तुम्हारे लिए न करूँ?"

× × ×

देवेन्द्र ला कालेज में पढ़ने मद्रास चला गया।

× × ×

उन्हीं दिनों देश के अधिकांश प्रान्तों में चुनाव में कांग्रेस की जीत हो गई और कांग्रेस ने पहले-पहल शासन का भार अपने ऊपर लिया।

वह एक अपूर्व उत्साह का अवसर था। सैकड़ों वर्षों की दासता की बेड़ी कटती मालूम पड़ी। वर्षों से ब्रिटिश सरकार के साथ चलनेवाली आज़ादी की निःशस्त्र लड़ाई सफल मालूम होती नज़र आई। संशयवादी लोगों को भी लगा कि किसी उच्च ध्येय के लिए की गई कुर्बानियाँ व्यर्थ नहीं जातीं।

देश के लिए सब तरह की यातनायें सहने वाले, विदेशी सरकार की लाठियाँ और गोलियाँ खानेवाले, कारावास और देश-निकाले की सज़ा भोगनेवाले—जो देश की जनता के सच्चे प्रतिनिधि थे—अब देश के शासक बन गये। चारों तरफ एक नूतन आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास और आशा का संचार हो गया।

विद्यार्थी जो स्कूल कालेजों के सरकारी प्रभाव में रहने के कारण, अपने को हमेशा आज़ादी के आन्दोलन और सरकार की विरोधी नीति के द्वंद्व से उत्पन्न एक विषम स्थिति में पाते थे, अब पहले पहल स्वतन्त्र वायु-मंडल में साँस लेने और सिर उठाकर चलने की आजादी का अनुभव करने लगे। गान्धीजी और कांग्रेस के प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति का भाव छिपाकर रखने का अब कोई कारण नहीं रह गया। देशभक्ति और आजादी की नई चेतना उनमें भिन्न भिन्न रूपों में प्रकट होने लगी। विद्यार्थियों को राष्ट्रनिर्माण के कार्य में पूरा भाग लेना चाहिये, इस विचार से प्रेरित होकर हर जगह उनके नये-नये संगठन बनने लगे। गान्धीजी के रचनात्मक कार्य के प्रति लोगों में एक नया उत्साह पैदा हो गया।

कालेज में भी कौनवेण्ट की तरह, सरला ने अपनी प्रतिभा और कुशलता के कारण, विद्यार्थियों में अपना एक विशेष स्थान बना लिया था। एक दिन नगर के विद्यार्थियों ने मिलकर एक सभा की और एक युवक संघ स्थापित करने का प्रस्ताव पास किया। संघ का उद्देश्य रखा गया रचनात्मक कार्यक्रम को सफल बनाने में सहयोग देना। सरला सर्व-सम्मति से उस संघ की मंत्री बनाई गई। संघ के सब सदस्यों के लिए खादी का इस्तेमाल अनिवार्य रखा गया। हरिजनोद्धार और ग्राम-सफाई का काम विशेष तौर पर करने का संघ ने निश्चय किया।

'गुलामी, क्षय रोग के कीटाणु की तरह एक जहर है। एक, रोगी के शरीर को भीतर ही भीतर खोखला बना देता है; और दूसरा, उसके मानवीय गुणों को नष्ट कर देता है। लेकिन बाहर से देखने से रोग का अन्दाज नहीं लगता। हमारा समाज सैकड़ों वर्षों की गुलामी के कारण, कुछ ऐसी मनोवृत्ति का आदी हो गया है कि उसे कलंकित करनेवाली कई बातें बिलकुल खटकती ही नहीं।

'राष्ट्रीय एकता के अभाव में यह देश बराबर विदेशी साहसिक लोभियों के लोभ का शिकार बनता रहा है। छूत के भेदभाव से हिंदू

समाज विभक्त और निर्बल बन गया है। जात-पात की शुद्धता की कट्टरता ने असली शुद्धता और सफाई के प्रति लोगों को उदासीन और लापरवाह बना दिया है।

'लेकिन आजाद भारत में सब मनुष्यों को समान हक प्राप्त होगा। जाति-धर्म, ऊँच-नीच, छूत-अछूत, शोषक-शोषित के नाम पर राष्ट्र अब टुकड़ों में बंट कर जीर्ण-शीर्ण और दयनीय अवस्था में नहीं पड़ा रहेगा। हमारा नूतन राष्ट्रप्रेम, बन्धुत्व, समानता और स्वतन्त्रता के आधार पर निर्मित होगा।'

—इन विचारों से प्रेरित होकर युवकसंघ के सदस्यों ने देश की सेवा करने का निश्चय किया।

उन्होंने ऐलान किया कि अस्पृश्यता समाज में सैकड़ों वर्षों से चली आनेवाली शोषण प्रवृत्ति का भयंकर परिणाम है जिसने शोषित और शोषक, दोनों को गिराया है। स्वतन्त्र राष्ट्र के स्वस्थ शरीर के लिए इस रोग को आमूल नष्ट करना परम आवश्यक है।

युवक संघ के सदस्यों ने हरिजन बस्तियों में जा-जाकर हरिजनों को स्वतन्त्रता का सन्देश सुनाना शुरू किया। हरिजन भी मनुष्य हैं, उन्हें भी अन्य लोगों की तरह भरपेट अच्छा खाना खाने, साफ-सुथरे कपड़े पहनने, साफ-सुथरे घरों में रहने और शिक्षा पाने का हक है। किसी को अछूत मानकर उसे दलित बनाये रखना घोर अन्याय है। स्वतन्त्र भारत इसको बर्दाश्त नहीं कर सकता।

हरिजनों के लिए रात्रि पाठशालायें चलने लगीं। उनकी स्थिति सुधारने के नये-नये उपाय होने लगे। हरिजनों में एक नयी जागृति की लहर पैदा हुई और उनमें सुधार, निर्माण और आत्म-सम्मान की एक नयी भावना उमड़ पड़ी।

सरला ने संघ की सदस्याओं को लेकर हरिजन स्त्रियों और बच्चों में विशेष रूप से काम करना शुरू किया। जिस प्रदेश में हरिजनों को

छूना ही नहीं, पास आने देना और देखना तक वर्जित[1] था उसी प्रदेश में जब उच्च वर्ग की सुशिक्षित लड़कियाँ हरिजनों की बस्तियों में जा-जाकर हरिजनों के गन्दे बच्चों को अपने हाथों नहला-धुलाकर साफ करने और उन्हें इकट्ठा कर कुछ सिखाने लगीं तब उस उपेक्षित और पीड़ित वर्ग के लोगों के आनन्द का ठिकाना नहीं रहा। उन्हें लगा कि उनका भाग्य ही पलट रहा है।

सरला को, जो समाज के परिष्कृत वातावरण में पली थी, हरिजनों के निकट सम्पर्क में आने के बाद, मानवता का एक नये रूप में दर्शन हुआ। और वह अपनी विवेचनाशील बुद्धि से समझ गई कि मनुष्य जीवन की सार्थकता किस बात में है। महात्मा गान्धी का नाम अभी तक उसने दूर से ही सुना था या उन्हें दूर से देखा था। अब हरिजनों की सेवा करने का थोड़ा अवसर पाकर उसे उस महात्मा को समझने की एक नयी दृष्टि प्राप्त हो गई। उसे लगा कि उसको वह गुरु मिल गया, जिसकी उसे आवश्यकता थी।

———

१ केरल में पुरानी रीति के अनुसार अस्पृश्य माने जाने वाले 'परया' और 'पुलया' लोगों को सवर्ण जाति वालों से क्रमशः १५० और १२० गज़ के फ़ासले पर रहना चाहिये। 'नायाटी' कहलाने वालोंको सवर्ण लोग दूर ही नहीं रखते वरन् उन्हें देखना भी अपवित्र करने वाला मानते हैं। अब हरिजनों को अन्य हिन्दुओं के बराबर अधिकार देने के कानून पास हो गये हैं।

तीसरा भाग

: १ :

मद्रास के विमेन्स कालेज में खेल की घण्टी बजी। लड़कियाँ अपने-अपने कमरे से निकल कर मैदान में जाने लगीं। सरला वाचनालय में थी। घण्टी बजने पर वह अपनी पुस्तक बन्द करके उठी और सीधे अपने कमरे में गई।

बी० ए० पास करने के बाद एल० टी० के लिए मद्रास आये उसे ६ महीने हो गये थे। उसके साथ उसकी सहपाठिनी और प्रिय सखी सुधा भी आई थी। दोनों सहेलियाँ लेडी विलिंगडन कालेज में भर्ती हो गई थीं और विमेन्स कालेज होस्टल में रहती थीं।

होस्टल कालेज के ही मकान के दो मंजिले पर है। सरला और सुधा सटे-सटे दो कमरों में एक-एक सहेली के साथ रहती थीं। सरला की सहेली का नाम कमला था।

जब कमला अपनी रैकेट उठाकर जाने लगी तब सरला अपने हाथ में एक पुस्तक लेकर ऊपर खुली छत पर जाने के लिए उठी।

"क्या अभी पढ़ने जा रही हो, सरला? "आज मैच है, देखने नहीं चलोगी?" कमला ने पूछा।

"मैंने टैगोर का "रेक" (Wreck) शुरू किया है। इसे खतम किये बिना दूसरी किसी बात में मेरा मन नहीं लग सकता। तुम जाओ; मुझे इसे पढ़ने दो," सरला ने जवाब दिया।

सरला छत पर चली गई। वहाँ और कोई छात्रा नहीं थी। उसने पुस्तक खोलकर गोद में रख ली। लेकिन पढ़ना शुरू करने के बदले सामने लहराते हुए अनन्त समुद्र की लहरों का मचलना देखने लगी।

लहरों के चढ़ाव-उतार के साथ-साथ वह भी विचार सागर में गोते लगाने लगी। कुछ ही देर के बाद सुधा वहाँ आ पहुँची। उसने पूछा "यह क्या सरला ? सब खेल के मैदान में हैं और तुम यहाँ क्या कर रही हो ? तुम्हें न 'टिफिन-रूम' में पाया न मैदान में देखा। तब कमला से मालूम हुआ कि तुम उपन्यास पढ़ने में तल्लीन हो। पढ़ रही हो या दिवा-स्वप्न देख रही हो ?"

सरला मुस्करायी और बोली, "दिवा–स्वप्न नहीं, सुधा, मैं तो एक ऐसे जीवन की कल्पना कर रही हूं जो शीघ्र ही सत्य होनेवाला है।"

सुधा—होगी वही संस्था स्थापित करने की, आजीवन ब्रह्मचारिणी रहने और सेवा करने की कल्पना। मगर उसके लिए अभी से इतनी माथापच्ची करने की क्या आवश्यकता ?

"बात यह है सुधा कि कमला अभी-अभी मुझसे यही बातें करके गई है। उसे तो मेरी कल्पनाओं को तोड़ देने का मानो भूत-सा सवार हो गया है।"

"वह क्या कहती थी ?"

"वही पुरानी बात—कोई लड़की किसी लड़के से प्रेम किये बिना नहीं रह सकती, कुँवारी रहने का व्रत ढोंग है, ऐसी स्त्रियाँ भग्न-हृदया हुआ करती हैं, आदि आदि...।"

सुधा हँस दी और बोली "बस, इतनी ही बात !"

सरला—क्या यह कुछ कम अन्याय है सुधा ! एक तो दुनिया के उदाहरण इसे प्रमाणित नहीं करते, दूसरे यदि यह सच भी हो तो भी इससे यह सिद्ध नहीं होता कि उसके विपरीत कभी कुछ होना सम्भव ही नहीं है।

"असम्भव कुछ भी नहीं है। फर्क केवल दृष्टिकोण का है। मनुष्य में ऐसी शक्ति है कि वह अपने को जैसा चाहे बना सकता है।

दोनों सखियाँ इस प्रकार बातें कर ही रही थीं कि वहाँ कमला फिर आ पहुँची। आते ही उसने कहा "वही बातें फिर चल रही हैं क्या ?"

सरला—"उन्हें रोक न पाओगी कमला।"

कमला—मैं कहती हूँ, यह सब पागलपन है। पढ़ो-लिखो और वापस जाकर कोई सुन्दर-सा घर बसाओ। भला बताओ सुधा, आजीवन कुमारी रहने का विचार एक पागलपन नहीं तो और क्या है ? परिस्थिति भले ही किसीसे कुछ भी करावे। पर नैसर्गिक प्रवृत्तियों को दबाकर आजीवन ब्रह्मचर्य का जीवन बिताने वगैरह जैसी बातें आत्मवंचना नहीं तो और क्या हैं ?

सुधा ने कहा, "मैं अपना विचार कहूँ, कमला ? मैं यह कहने के लिए तैयार नहीं हूँ कि जो इन्द्रिय सुख को निस्सार मानकर किसी उच्च आदर्श पर चलना चाहते हैं वे सब मूर्ख हैं ; अपने को धोखा देनेवाले हैं। लेकिन इतना तो कह सकती हूं कि यह मार्ग इतना सुगम नहीं है।"

कमला—बात यह है कि कानवेण्ट की शिक्षा ने सरला के दिमाग में गलत विचार भर दिये हैं। मैं तो सिस्टरों की छाया से भी दूर भागती हूँ। मुझे उनकी काली पोशाक के भीतर कुछ रहस्य का ही आभास मिलता है।

सरला—तुमने उन्हें नज़दीक से नहीं देखा है, कमला ? मैंने तो उन्हें बहुत नजदीक से देखा है और मैं कह सकती हूँ कि उनमें अधिकांश स्नेहशील, पवित्र और सेवामय जीवन बिताने वाली होती हैं।

सुधा—मेरा ऐसा अनुमान है कि ऐसी आदर्श सिस्टरें कम ही होंगी। ज्यादातर तो इस जीवन को अपनी निराशाओं या कुरूपताओं के कारण ही अपनाती होंगी। ऐसा भी तो देखा गया है कि कई इस जीवन में प्रवेश करने के बाद भी इसको त्याग कर लौकिक जीवन बिताने लगती हैं।

सरला—चाहे जो हो। आजीवन कुँवारी रहने की मेरी इच्छा को मेरी एक महत्वाकांक्षा ही समझो। इसकी पूर्ति के लिए मैं प्रयत्न करूँगी।

इसके बाद ब्यालू की घण्टी बजी और तीनों नीचे उतरीं।

: २ :

प्रसव के लिए कुमुद के घर आये तीन महीने हो रहे थे। प्रसव बहुत कष्टदायक रहा। डाक्टर की मदद की जरूरत पड़ी। डाक्टर ने माँ और बच्चे की देखभाल के लिए सिस्टर जोसेफिन को भेजा था जो नर्सिंग ट्रेनिंग खतम करके अस्पताल में हेड नर्स का काम कर रही थी। जब बारहवें दिन कुमुद का बुखार उतरा तब पार्वती अम्माँ के जी में जी आया। वह मनाने लगीं कि बच्चे के प्रथम जन्म नक्षत्र के दिन तक कुमुद पूर्णतः स्वस्थ हो जाय।

प्रथम जन्म नक्षत्र[1] के चार दिन बाकी थे। देवेन्द्र उस दिन के आयोजन के बारे में कुछ परामर्श करने के विचार से कुमुद के पास आया। कमरे के बाहर से आवाज दी, "कुमुद, क्या कर रही हो?" कुमुद बच्चे को मच्छरदानी के भीतर सुलाकर स्वयं भी लेटी हुई थी। "आइये," कहते हुये वह बिछौने से उठने लगी।

देवेन्द्र तिपाई के पास पड़ी कुर्सी पर बैठते हुए बोला, "तुम लेटी रहो। अभी बहुत कमजोर हो। लेटे-लेटे बातें करना काफी है।"

"नहीं, अब इतनी कमजोर नहीं हूँ।"

"अभी बहुत सावधान रहने की जरूरत है। सच पूछो तो तुम्हारा नया जन्म ही हुआ है। बच्चे के जन्म के समय की तुम्हारी बेहोशी और

---

१ जन्म के अठाइसवें दिन पर आनेवाला नक्षत्र। केरल में तिथि के बदले में नक्षत्र के आधार पर जन्म दिन मनाया जाता है।

उसके बाद बुखार का दौरा......ओह, कैसी चिंताजनक स्थिति थी ! सिस्टर जोसेफिन ने उन दिनों जो मदद पहुँचाई वह कभी भुलाई नहीं जा सकती।

"आखिर आदमी को एक न एक दिन तो मरना ही है ! दो दिन पहले चला जाय तो अच्छा ही समझना चाहिये।"

"यह क्या कह रही हो, कुमुद ! तुम्हें कुछ हो जाता तो माँ का क्या हाल होता, बालकृष्ण का क्या होता और सबसे बढ़कर इस बच्चे का क्या होता ?"

"मैंने सिर्फ अपने सुख-दुःख के ख्याल से ही कहा।"

"अपने सुख-दुख के ख्याल से ?...इसका क्या मतलब ?"

कुमुद जो आँखें नीचे किये बैठी थी, बोली, "मैंने ऐसे ही कह दिया।"

देवेन्द्र—"कुमुद, तुम कुछ छिपा रही हो। तुम मुझे अपना भाई नहीं समझती ?"

कुमुद ने जरा मुस्कराते हुये कहा, "अब तो मैं जी ही गई, और बहुत दिनों तक जीऊँगी।......कहिये, क्या कहना चाहते थे ?

देवेन्द्र—तुम्हारी बातों ने मुझे आश्चर्य में डाल दिया है। तुम्हें जरूर कुछ सता रहा है। साफ-साफ क्यों नहीं बताती कुमुद ?

कुमुद एक क्षण चुप रही। फिर बोली, "क्या बताऊँ ? मनुष्य के जीवन में तो कभी-कभी ऐसे तूफान आते ही हैं जो हरे-भरे बाग को उजाड़ देते और मनुष्य के लिए आहें भरने का कारण छोड़ जाते हैं।"

देवेन्द्र कुमुद की बातें सुनकर निस्तब्ध बैठा रहा। उसके मन में कई ऐसी शंकायें उठीं जो पहले कभी नहीं हुई थीं। अन्त में वह बोला, "सच है कुमुद, तूफान उजाड़ने के लिए ही आते हैं। कमजोर पेड़-पौधे उखड़कर धराशायी हो जाते हैं। खड़े रहते हैं वे जो बलिष्ठ होते हैं

और जिनकी जड़ें बहुत गहराई तक पहुंची रहती हैं।......निस्सन्देह तूफ़ान उजाड़ने के साथ-साथ मजबूत बने रहना भी सिखाते हैं।

इसके बाद दोनों मौन रहे। कुछ देर के बाद कुमुद ने कहा, "अप्पन [२] के नामकरण के लिए आपको इसके मामा का स्थान तो लेना ही है। मैं चाहती हूँ कि आपके भाँजे को आप ही का नाम मिले।"

देवेन्द्र—मामा का स्थान तो मैं अभिमान और गौरव के साथ ग्रहण करूँगा। लेकिन मैं कहूँगा कि बच्चे का नाम बालचन्द्र रहे या कृष्णदेव।

कुमुद ने 'कृष्णदेव' नाम रखने की सम्मति दे दी।

नामकरण उत्सव के सम्बन्ध में कुछ और परामर्श करके देवेन्द्र चला गया।

× × ×

बच्चे के जन्म के अट्ठाइसवें दिन पार्वती अम्माँ ने बन्धु-मित्रों को निमंत्रित किया। मद्रास से उण्णि कृष्ण मेनोन और राधम्मा भी पहुंच गये।

हॉल में एक बड़ा दीप जलाकर रखा गया। पूजा के सब सामान रख दिये गये। कुमुद ने नये वस्त्रादि धारण करके हॉल में प्रवेश किया। देवेन्द्र दीप के पास रखे एक आसन पर बैठ गया। कुमुद ने बच्चे को देवेन्द्र की गोद में दे दिया। राधम्माँ ने बच्चे की कमर में एक सोने की करधनी पहना दी जिसे वे अपने साथ लाई थीं। पार्वती अम्माँ ने उसकी आँखों में काजल लगा दिया और वयम्पु [३] का टीका लगाकर बाकी उसे चटा दिया।

---

२ दुलार से पुकारने का नाम।

३ बच्चे की शरीर-शुद्धि और स्वास्थ्य के लिए माँ के दूध में मुलहठी, 'वयम्पु', हर्रे, चन्दन, द्राक्ष और स्वर्ण घिस कर देने की प्रथा है।

इतना हो चुकने पर देवेन्द्र ने बच्चे को उठाकर उसके दोनों कानों में धीमे स्वर से तीन बार "कृष्णदेव" नाम का उच्चारण किया और उस के बाद जोर से "कृष्णदेव" कहकर उसे पुकारा।

उसके बाद उसे ले जाकर पहले-पहले पालने में रख दिया जो रंग-बिरंगे झालरों से सजाकर वहाँ रखा हुआ था। लीला पालना झुलाने और लोरियाँ गाने लगी।

: ३ :

एल० टी० परीक्षा में सरला और सुधा दोनों उत्तीर्ण हो गईं। सुधा को ६ मील दूर अपने गाँव के स्कूल में और सरला को अपने नगर के सरकारी गर्ल्स हाई स्कूल में काम मिल गया। सब खुश थे। लेकिन सरला के विवाह सम्बन्धी विचारों ने माधवी अम्माँ की खुशी को किर-किरा कर दिया।

×   ×   ×

एक दिन माधवी अम्माँ ने शंकर मेनोन से और बातों के सिलसिले में कहा, "मद्रास जाकर आजीवन कुँआरी रहने का एक नया विचार लेकर लौटी है। भगवान् जाने इसके नसीब में क्या बदा है।...... मेरी बात चलती तो मैं देवेन्द्र को ही अपना जामाता बनाती। लेकिन..." —माधवी अम्माँ कहते-कहते रुक गईं।

मेनोन ने कहा, "हमारा जो कर्तव्य है उसे हमने पूरा कर दिया। उसे पुत्र मानकर पाला है। उसका अपना व्यक्तित्व है, अपने विचार और इच्छायें हैं। वह अब अबोध बच्ची नहीं रही। उसपर हमें अपने विचार लादना ठीक नहीं है। देवेन्द्र भी हमें कितना ही प्यारा क्यों न हो, हम ऐसा कुछ नहीं कर सकते जिससे उसके स्वतन्त्र निर्णय में किसी तरह हस्तक्षेप हो। सच्चा विवाह तो दो हृदयों का मिलन है। हमें धैर्य से काम लेना चाहिये।"

माधवी अम्मां--लेकिन मां के धैर्य की भी सीमा होती है न ! आप ने ही उसके दिमाग......।

इतने में देवेन्द्र आता दिखाई पड़ा। पास पहुंचकर उसने दोनों को प्रणाम किया। माधवी अम्मां ने पूछा, "पार्वती अम्मां अब अच्छी हैं न ?

देवेन्द्र ने जवाब दिया, "आज पथ्य लिया है। दो एक दिन में बिलकुल ठीक हो जायेंगी।

"मैं जाकर चाय भेज देती हूँ", कहकर माधवी अम्मां चली गयीं। थोड़ी देर में सरला केटिल में चाय लेकर आई और दो प्यालियों में उढेलकर पिता और देवेन्द्र के सामने रख दी।

चाय पान हो जाने के बाद प्रोफेसर ने कहा, "दो दिन तुम नहीं आये तो मेरा बाहर जाना भी बन्द ही रहा। चलो, जरा पार्क की तरफ हो आवें। सरला, तुम भी चलो।"

सरला तैयार होकर आ गई और तीनों निकल पड़े।

पार्क में पहुंचने पर प्रोफेसर एक बेंच पर बैठ गये। सरला और देवेन्द्र उनकी ओर आमुख हो नीचे दूब पर बैठे।

सरला ने कहा, "पिता जी, हमारे स्कूल में ड्रामा होने वाला है। हमें कालेज के ड्रामेटिक असोसियेशन से कुछ ड्रामा की पोशाक चाहिये। मैं कल एक सूची भेजूँगी। उसके अनुसार असोसियेशन के सेक्रेटरी से दिलवा दीजियेगा ?"

प्रो०—कब है ?

सरला—अगले गुरुवार को है।

देवेन्द्र—मालूम होता है बड़ी तैयारी हो रही है। लीला हमेशा उसी के बारे में चर्चा करती रहती है।

प्रो० —कौन-सा ड्रामा है ?

सरला—डी० एल० राय के दुर्गादास का हिन्दी अनुवाद और एक मलयालम प्रहसन।

प्रो०—डी० एल० राय के नाटक उच्चकोटि के होते हैं। उनसे नये नाटक-कारों को बहुत प्रेरणा और मार्गप्रदर्शन प्राप्त हुआ है। कल तीन बजे प्यून को भेज देना।

देवेन्द्र—पिता जी, आज के अखबार में स्टैफर्ड क्रिप्स का वक्तव्य तो आपने देखा ही होगा। उसके बारे में आपका क्या विचार है ?

प्रो०—अंग्रेज जाति हार स्वीकार करनेवाली जाति नहीं है। वह अपनी हार को भी जीत में परिणत करने की अक्ल रखती है। क्रिप्स-मिशन से भारत को कुछ विशेष लाभ होगा यह सोचना मूर्खता है।

देवेन्द्र—लेकिन कुछ लोग कहने लगे हैं कि कांग्रेस को इस अवसर पर सरकार के साथ युद्ध-सम्बन्धी प्रयत्नों में सहयोग करना चाहिये।

प्रो०—कांग्रेस देश के लोगों को ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए लड़ने को कैसे कह सकती है ?

देवेन्द्र—लेकिन अब तो अपने देश की रक्षा के लिए ही लड़ना आवश्यक हो गया है।

प्रो०—लेकिन भारत किस से लड़ेगा और क्यों ? कौन भारत का दुश्मन है ? ब्रिटिश सरकार आज भी भारत को कुछ देने के लिए तैयार नहीं है।

सरला—इसी लिए तो महात्माजी ने क्रिप्स योजना को भविष्य में भुनाने की तारीख वाला चेक कहा है। इङ्गलैण्ड स्वयं भारत को आजादी दे देगा, ऐसा सोचना, भारत में ब्रिटिश राज के इतिहास को भुला देना है।

प्रो०—लेकिन इतना निश्चित है कि अब अधिक दिन वह राज भारत में कायम नहीं रह सकता।

सरला—सो तो ठीक है। और यह भी सच है कि इङ्गलैण्ड खुशी से अपने मुकुट का रत्न निकालकर नहीं फेंक देगा?

: ४ :

दोपहर का समय था। सरला अपने कमरे में थी। माधवी अम्मां हाथ में एक लिफाफा लेकर आयीं। सरला ने देखकर पूछा, "मेरे लिए पत्र है, अम्मां?"

"यह शीला के विवाह का निमंत्रण है, बेटी। पिताजी तो सिर दर्द के कारण जा नहीं सकेंगे। मैं भी नहीं जाऊँगी। तुम पांच बजे चली जाना। प्रिन्सिपल आज सवेरे आकर कह गये कि शीला ने तुम्हें खास तौर से बुलाया है। रात को तुम्हें लिवा लेने के लिए नौकर को भेज दूँगी।"

"मेरा शादी-व्यादी में जाने का मन नहीं करता, माँ। शीला के पास क्षमा प्रार्थना का एक पत्र भेज दूँगी। किसी दूसरे दिन जा कर मिल आऊँगी।"

"नहीं सरला, हममें से कोई नहीं जायेगा तो उन्हें बड़ा बुरा लगेगा। शीला तुमसे कितना स्नेह करती है। आखिर इस तरह कोने में घुस कर हमेशा पुस्तकें उलटते रहने से क्या फायदा?...दुनिया से भागने से थोड़े ही काम चलेगा?"

माँ की बातें सुन कर वह बोली, "क्षमा करो माँ, चली जाऊँगी।"

सरला जब प्रिन्सिपल श्रीधर पुदुवाल के घर पहुँची तब तक बहुत-सी महिलायें वहाँ आ चुकी थीं। प्रिन्सिपल और उनकी पत्नी ने सरला से उसके माता-पिता के नहीं आने का कारण पूछा और उसे शीला के पास दो मंजिले पर भेज दिया। सरला शीला के पास थोड़ा समय बिता

कर बाहर आई और बरामदे के एक छोर पर एक सोफा देख कर उस पर जा बैठी। यहाँ से नीचे के मण्डप की चहल-पहल अच्छी तरह दिखाई पड़ती थी। थोड़ी देर के बाद उसने सुधा को आते देखा। उससे जा कर मिली और दोनों शीला के कमरे में गईं। फिर बातें करते नीचे चली गईं।

सरला—सुधा, कमला का पत्र आया है। लिखती है कि उसके विवाह का दिन निश्चित हो गया है।

सुधा—मुझे भी उसका पत्र मिला है। उसमें पूछा है कि सरला के सिर से आजीवन कुमारी रहने का भूत उतरा है या नहीं।

इतने में देवेन्द्र उनके पास पहुँच कर बोला, "क्षमा कीजियेगा। आपकी बात-चीत में बाधा तो नहीं डाल रहा हूँ? सरला, पिता जी नहीं आयेंगे?"

सरला ने पिता के न आने का कारण बतला कर देवेन्द्र और सुधा का परस्पर परिचय कराया।

देवेन्द्र—(सुधा से) आपका साक्षात् परिचय प्राप्त कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। आप लोग खड़ी क्यों हैं? चलिये, वहाँ कुर्सियाँ खाली हैं, बैठ कर बातें करें।

तीनों एक एकान्त जगह देख कर कुर्सियों पर जा बैठे। देवेन्द्र ने शुरू किया, "सरला से पहले ही आपके बारे में सुन चुका हूँ।"

सुधा—आप भी मेरे लिये बिलकुल नये नहीं हैं। कहिये, वकालत तो खूब चल रही है!

"अभी तो नौसिखिया ही हूँ। हाँ, चुप बैठा रहना नहीं पड़ता।... क्यों, आपका तो सारा समय अब अपने गाँव में ही कटता है?

"हाँ, काफी काम रहता है।"

"मद्रास की तुलना में तो गाँव का जीवन बड़ा नीरस ही लगता होगा?"

"मद्रास से तुलना करने की जरूरत ही क्या है ? जो जहाँ रहे उसे वहीं की नजर से सब चीजे देखनी चाहिये।"

"यह तो ठीक ही है। लेकिन सुखद-स्मृतियों में एक आकर्षण हुआ ही करता है जो मनुष्य को परिस्थितियों से निर्मित सीमाओं को अतिक्रम कर के अपने मन की दुनिया प्राप्त करने को प्रेरित करता है।"

"मेरे विचार में तो एक दूसरी तरह का भी आकर्षण हुआ करता है जो सुखद स्मृतियों के आकर्षण से भी ठोस और आनन्ददायक होता है। वह है कर्तव्य का आकर्षण।"

"कतव्य का आकर्षण ?"

"जी हाँ, कर्तव्य का आकर्षण। कर्तव्य पालन में जिस सुख और सन्तोष का अनुभव होता है वह स्वयं परिपूर्ण है। उसके सामने अन्य सब आकर्षण फीके पड़ जाते हैं।"

"वाह, आपने तो बड़े मार्के की बात कही। आपसे बातें कर के केवल मन ही प्रसन्न नहीं होता बुद्धि का भी विकास होता है।"

सुधा—ऐसा कह कर आप अपनी शालीनता प्रकट कर रहे हैं। स्त्रियाँ तो अपनी मन्दबुद्धि के लिये प्रसिद्ध हैं ही।

सरला—मन्द बुद्धि के साथ-साथ अबला भी तो हैं !

देवेन्द्र—(हँसते हुए) कम-से-कम मेरा तो ऐसा ख्याल नहीं है। मैं तो कवि की इस बात को मानता हूँ,

'उसने ठीक जीवन नहीं बिताया
जिसको एक स्त्री के प्रेम ने पवित्र नहीं बनाया,
उसके साहस ने बलवान नहीं बनाया, और
उसकी बुद्धि ने मार्ग नहीं दिखाया × ।'

× "He never led a right life
Who has not been chastened by a woman's love,
Stengthened by her courage
And guided by her discretion."

सुधा—स्त्री के साथ न्याय किया जाय तो पर्याप्त होगा। साहित्य में कवियों ने स्त्रियों का बड़ा गुणगान किया है। अपने वर्णन और चित्रण में अद्‌भुत कल्पना शक्ति खर्च की है। किन्तु इससे स्त्री को कोई लाभ नहीं हुआ है।

देवेन्द्र—तो स्त्री के प्रति पुरुषों ने जो विचार प्रकट किये हैं, उन्हें आप निरर्थक मानती हैं ?

सुधा—निरर्थक ही नहीं, हानिकारक भी। पुरुषों ने स्त्री के बारे में जो कुछ लिखा है वह या तो उनकी भावुकता का परिणाम है या विलासिता का या स्वार्थ का।

देवेन्द्र—ये तो बड़े अनुदार विचार मालूम पड़ते हैं।

सुधा—अनुदार विचार प्रकट करने का मेरा उद्देश्य नहीं है। लेकिन मैं ऐसा मानती हूँ कि पुरुषों ने अपनी रचनाओं में स्त्री का जो रूप चित्रित किया है वह उनकी अपनी कल्पना का ही परिणाम है। वास्तविकता से उसका बहुत कम सम्बन्ध है। इससे स्त्रियों का अहित ही हुआ है।

देवेन्द्र—मेरा तो ख्याल है कि पुरुष की दृष्टि में स्त्री, मनुष्य में जो सर्वोत्तम है उसकी प्रतिमूर्ति है। पुरुष आदिकाल से अपनी उस अनुभूति को अभिव्यक्त करने में प्रयत्न शील रहा है। लेकिन आपके विचार मुझे इस सम्बन्ध में और भी सोचने को बाध्य करते हैं।

सुधा—सोचिये, अवश्य सोचिये। आज पुरुषों को ही नहीं, स्त्रियों को सोचने का काम करना है। क्योंकि अब तक स्त्रियों के लिये पुरुषों ने ही सोचने और उन्हें अपनी कल्पना के ढाँचे में ढालने की कोशिश की है।

देवेन्द्र—आपके विचार बहुत मनोहारी जान पड़ते हैं। पता नहीं, सरला के विचार भी आप ही की तरह हैं या क्या ? मेरा अपना ख्याल है कि स्त्री-पुरुष एक दूसरे को जितना सही-सही समझ सकते

हैं, अपने आपको नहीं समझ सकते। अभिव्यक्ति में त्रुटि या अतिशयोक्ति हो सकती है। पर सही मूल्यांकन के लिये एक को दूसरे की हमेशा आवश्यकता रहेगी। (फिर मुस्कराते हुए) पुरुष ने चाहे जो भी भूलें की हों, वह हमेशा स्त्री का पुजारी और रक्षक रहा है।

सुधा हँस पड़ी और बोली, "बस-बस, सारे अनर्थ की जड़ तो यही ख्याल है कि 'पुरुष स्त्री का पुजारी और रक्षक है।' मैं पूछती हूँ कि अगर पुरुष अपनी यह जिम्मेदारी त्याग दे तो दुनिया से स्त्रियों का अस्तित्व मिट जायेगा ?"

देवेन्द्र—"क्या आप स्त्री-पुरुष में भेद नहीं मानती ?"

सुधा—भेद क्यों नहीं मानती ? लेकिन क्या स्त्री-पुरुष समान प्राणी नहीं हैं ? एक जैसे मनुष्य नहीं हैं ? तब स्त्रियों को सामान्य प्राणी मान कर उनके साथ क्यों नहीं समान व्यवहार होना चाहिये ? स्त्री का अपना कोई व्यक्तित्व नहीं माना जाता। वह या तो पुरुष के स्वप्न लोक की परी है, या घर की गुड़िया या उसके शोषण की सामग्री है।

इसी बीच किसी ने देवेन्द्र को पुकारा। वे सुधा की ओर देखते हुए बोले, "आज की बातें खतम नहीं समझिये। फिर मिल कर कुछ और सुनने का मौका देने की कृपा कीजियेगा।"

देवेन्द्र के चले जाने पर सरला, जो अब तक बड़ी दिलचस्पी से दोनों की बहस सुन रही थी, बोल उठी, "सुधा, देवेन्द्र तुम्हारी बातों में ही नहीं, आँखों में भी फँस गये मालूम होते हैं। अब देखना, तुम्हारा किस तरह पीछा करते हैं।"

सुधा—जा पगली, अपनी तरफ तो देखती नहीं, दूसरों को बनाने चली है।

मुहूर्त का समय हो गया। अतिथियों से मंडप भरने लगा। सरला और सुधा भी जाकर बैठ गईं।

: ५ :

सरला एक दिन शाम को अपने घर के सामने प्रांगण में एक आराम कुर्सी पर लेटे एक पुस्तक पढ़ रही थी। देवेन्द्र वायु-सेवन के लिये निकल कर सरला के घर पहुँचा। सरला ने उठ कर देवेन्द्र के बैठने के लिये कुर्सी बढ़ा दी।

देवेन्द्र ने पूछा, "स्कूल किस तारीख को बन्द हो रहा है?"

सरला—वार्षिक परीक्षायें चल रही हैं। ३० तक खतम हो जायेंगी। १ अप्रैल से छुट्टी शुरू हो जायेगी। इस बार पिता जी की राय है कि हम सब ऊटी जायें। मकान का प्रबन्ध कर देने को एक मित्र को लिख भी दिया है।

देवेन्द्र—हाँ, कल मुझसे भी इसके बारे में जिक्र किया था। मुझे भी साथ चलने को कहा है।

सरला—तब तो बड़ा अच्छा होगा। ऊटी में आलवे के तट का तो आनन्द नहीं आयेगा। पर वहाँ सुन्दर दृश्य देखने को मिलेंगे।

देवेन्द्र—वहाँ की ठण्डक का भी आनन्द मिलेगा। गरमी में भी शरीर को गर्म कपड़े से ढकने की जरूरत पड़ जाती है।

सरला—आप तो ऊटी देख ही चुके हैं। मैं तो अखबारों में ऊटी घुड़-दौड़ की बातें पढ़-पढ़ कर ही पहले-पहल ऊटी की तरफ आकृष्ट हुई थी। पर अब तक वहाँ जाने का मौका नहीं मिला।

देवेन्द्र—ऊटी की घुड़दौड़ तो एक मशहूर तमाशा है। कहाँ-कहाँ के लोग अपने-अपने घोड़े ले लेकर उसमें भाग लेने के लिये पहुँचते हैं। बाजी लगाने में लाखों रुपयों के वारे-न्यारे होते हैं। हजारों की भीड़ देखने के लिये इकट्ठी होती है।

सरला—घुड़सवारी सीखने की मेरी एक पुरानी इच्छा है।

देवेन्द्र ने हँसते हुए कहा, "तो यह कौन-सी बड़ी बात है? यह भी सीख लेना। साइकिल चलाना, नाव चलाना और लाठी भाँजना जानती

ही हो। घोड़े पर चढ़ना भी सीख लो तो तुम्हारी फ़िजिकल ट्रेनिंग पूरी हो जायेगी।"

सरला—बचपन में जब मैं राजकन्या को घोड़े पर सवारी करते देखती थी तभी से मेरे मन में यह इच्छा है। पर यहाँ इसके लिये कोई सुविधा ही नहीं मिली।

देवेन्द्र—ऊटी में इसका प्रबन्ध हो जायेगा।

सरला—आपको मालूम है ? आप सिखा सकते हैं ?

देवेन्द्र—खुशी से। मद्रास में यू. टी. सी.[1] में हम लोगों को घुड़-सवारी सिखाई गई थी।

सरला—तब तो मैं जरूर सीखूँगी। सुधा भी सीखेगी। उसे भी मैं ऊटी चलने को कहूँगी।

देवेन्द्र—तब तो बड़ा दिलचस्प रहेगा। लेकिन उनके आने का क्या ठिकाना ?

सरला—आपको इसमें सन्देह क्यों होता है ? वह अवश्य आयेगी। —यह कह कर सरला मुस्कराई। उसका अनुमान कि सुधा के आने की बात सुन कर देवेन्द्र खुश होंगे, सच निकला।

× × ×

ऊटी के लिए रवाना होने का दिन निश्चित हो गया। सरला का निमंत्रण पाकर सुधा एक दिन पहले ही उसके यहाँ आ गई।

सरला को एक नई उमंग का अनुभव हो रहा था। देवेन्द्र के प्रति उसके हृदय में बहुत प्रीति का भाव था। उसके संग में उसे विशेष आनन्द आता था। देवेन्द्र भी ऊटी चलेगा और उससे वह घुड़सवारी सीखेगी। आज इन विचारों से वह और भी प्रसन्न थी।

---

१ यूनिवर्सिटी ट्रेनिंग कोर

देवेन्द्र और सरला मिल कर सामान बाँधने लगे। इस बीच सहसा सरला का हाथ देवेन्द्र के हाथ से छू गया। और उसके साथ ही उसके शरीर की कोई सुप्त तंत्री स्पन्दित हो गई। उसका सारा शरीर पुलकित हो उठा। दूसरे ही क्षण उसके दिल में धड़कन पैदा हो गई और चेहरा विवर्ण हो स्वेद बिन्दुओं से आक्रान्त हो गया। अपने को सम्भालने में असमर्थ पा कर सरला पास पड़ी आरामकुर्सी पर जा बैठी।

तब देवेन्द्र का ध्यान उसकी तरफ गया। उसने सरला के मुख का भाव देख कर कहा, "थकावट मालूम हो रही है सरला ! यह मेरी ही गलती थी। तुमसे इतने श्रम का काम नहीं लेना चाहिये था।" वह पंखा उठा कर सरला पर हवा करने लगा।

सरला ने कहा, "हाँ", थोड़ी थकावट मालूम हुई थी। अभी ठीक हो जाऊँगी।" और देवेन्द्र के हाथ से पंखा लेकर स्वयं झलने लगी। फिर बोली, "काम तो खतम हो ही गया। सुधा आ जाती तो पार्क की तरफ चला जाता।"

"तुम तैयार हो जाओ तब तक वह आ ही जायेगी", देवेन्द्र ने कहा।

इतने में सुधा आ पहुँची जो पार्वती अम्माँ और लीला को देखने गई थी। उसने सुनाया कि पार्वती अम्माँ को कुमुद का एक पत्र मिला है जिसमें उसने लिखा है कि उस का बच्चा फिर अस्वस्थ रहने लगा है।

देवेन्द्र ने कहा, "कुमुद बेचारी जब से यहाँ से गई तब से बच्चे की अस्वस्थता से बराबर परेशान रहती है।

चौथा भाग

: १ :

ऊटी में बोटैनिकल गार्डेन्स के पास एक बड़े अहाते के बीच "कोमल-विलास" एक दो मंजिला भवन है। उसके मालिक राजस्थान के एक महाराजा साहब हैं। वे कभी-कभी ग्रीष्म ऋतु में इस भवन में आकर ठहरते हैं।

प्रोफेसर शंकर मेनोन के एक मित्र ने जो राजा साहब के भी मित्र हैं, उनके ठहरने का प्रबन्ध इसी भवन में कर दिया था। एक छोटी पहाड़ी पर बना 'कोमल-विलास' ऊटी में अपनी रमणीयता के लिये प्रसिद्ध है। वहाँ से सारे शहर का एक विहंगावलोकन हो जाता है। चारों तरफ नीले रंग की पर्वत मालायें, जिनसे बादलों के टुकड़े उड़ते हुए सफेद रुई के ढेर की तरह टकरा-टकरा कर एक चित्ताकर्षक शोभा की सृष्टि करते हैं, लम्बे-लम्बे वृक्ष, तराइयों में छोटे-छोटे बंगले और बाग, गोल चक्कर काटने वाली साफ-सुथरी सड़कें और सीज़न (मौसम जब कि वहाँ की आब-हवा से लाभ उठाने के लिए बाहर के यात्री आते हैं) के दिनों में चौबीसों घंटे की चहल-पहल, सब 'कोमल-विलास' की ऊँचाई से दिखाई पड़ता है।

भवन के सामने एक फुलवारी है। जिसमें अनेक तरह के पौधे किस्म-किस्म के रंग-बिरंगे फूलों से लदे रहते हैं। बीच में कांक्रीट का बना एक बड़ा-सा हौज है जिसमें बिजली से चलने वाले एक फव्वारे से पानी की फुलझड़ी निकलती है। फुलवारी को गोलाई में घेरती हुई एक सड़क अहाते के एक फाटक से शुरू हो कर भवन के पोर्टिको से होती हुई दूसरे फाटक तक चली गई है। सड़क की दोनों तरफ हरी घास की लम्बी कतारें मखमली कालीन का आभास देती हैं।

'कोमल-विलास' पहुँचने के तीसरे दिन सवेरे जब सब नाश्ता के लिये बैठे थे तब देवेन्द्र ने कहा, "आज मुझे एक मित्र की माँ को देखने जाना है। वे ऊटी में स्वास्थ्य लाभ के लिये ठहरी हुई हैं।"

सरला—वह कौन है ?

देवेन्द्र—उसका नाम प्रफुल्ल घोष है।

मा० अम्मा—घोष तो बंगाली कहलाते हैं।

देवेन्द्र—हाँ, वह बंगाली है। मद्रास लॉ कालेज में मेरा सहपाठी था। हम दोनों एक ही कमरे में रहते थे। आजकल वह दिल्ली के सेक्रेटेरिएट में काम करता है। प्रफुल्ल ने लिखा है कि वह भी ऊटी आने वाला है।

इतने में बाहर किसी के आने की आवाज सुनाई पड़ी। देवेन्द्र ने जा कर देखा तो उसके आनन्द का ठिकाना नहीं रहा। स्वयं प्रफुल्ल पहुँच गया था। दोनों मित्र हर्ष से एक दूसरे से लिपट गये। देवेन्द्र ने प्रफुल्ल को अन्दर ले जा कर सबों से परिचय कराया। नमस्कार के आदान-प्रदान के बाद प्रफुल्ल ने सुनाया कि वह निश्चित दिन से दो दिन पहले ही पिछली रात को ऊटी पहुँच गया। और उन सबों के दर्शन के लिये सवेरे ही निकल पड़ा है। उसने देवेन्द्र से कहा, "माँ दो दिन से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हैं। मैंने उन्हें तुम्हारे ऊटी आने के बारे में लिख दिया था।"

देवेन्द्र—तुम्हारे यहाँ पहुँचने के एक मिनट पहले मैं पिता जी को तुम्हारे बारे में ही सुना रहा था। आज मैं निश्चित् रूप में माँ को देखने जाने वाला था। परसों शाम को हम यहाँ पहुँचे। कल दिन भर घर की व्यवस्था में व्यस्त रहा।"

प्रफुल्ल—माँ और शैला ने कहा है कि आप सबों से वहाँ पधारने के लिये प्रार्थना करूँ।"

माधवी अम्माँ ने प्रफुल्ल के सामने नाश्ता और कॉफी रखते हुए कहा, "हम अवश्य चलेंगे। आप की माता जी और बहन से मिल कर हमें बहुत प्रसन्नता होगी।" नाश्ता के बाद सब प्रफुल्ल के निवास स्थान को चल पड़े।

प्रोफेसर का दल प्रफुल्ल के साथ उसके घर पहुँचा। प्रफुल्ल की माँ निरुपमा देवी और बहन शैला ने उसका स्वागत किया। सबों के बैठ जाने पर निरुपमा देवी ने कहा, "प्रफुल्ल के पत्र से आप लोगों के ऊटी आने की खबर मुझे लग गई थी। चलने-फिरने से डाक्टर ने मना किया है। नहीं तो मैं 'कोमल-विलास' आप लोगों को देखने जरूर जाती।

माधवी अम्माँ ने कहा, "देवेन्द्र ने आज ही आपके बारे में चर्चा उठाई। इतने में प्रफुल्ल बाबू पहुँच गये। और हम सब यहाँ के लिये निकल पड़े। ऊटी में आने के बाद तो आपको अवश्य सुधार मालूम होता होगा।

नि० देवी—जब आई तब तो बिस्तरे से उठना भी मुश्किल था। दो ही सप्ताह में बहुत सुधार हुआ है।

प्रोफेसर—ऊटी की जल-वायु इस मौसम में बहुत स्वास्थ्यवर्द्धक मानी जाती है। आपने मलबार की मालिश-चिकित्सा से कभी काम लिया है या नहीं? वात रोगियों को उससे बहुत लाभ होता है।

नि० देवी—जब हम मद्रास में रहते थे तब मालिश की चिकित्सा एक दो बार कराई थी। उससे बहुत फायदा मालूम हुआ था। इस बार भी कराने की बात सोच रही हूँ।

मा० अम्मा—जरूर कराइये। यहाँ तो उसका प्रबन्ध कराने में कोई असुविधा भी नहीं होगी।

प्रफुल्ल—उत्तम तो होगा कि वह जिस प्रदेश की चिकित्सा है, उसी प्रदेश के किसी विशेषज्ञ की देख-रेख में चिकित्सा कराई जाय।

लेकिन इसके लिये तो केरल जाना होगा और देवेन्द्र को सब प्रबन्ध का भार अपने ऊपर उठाना होगा।

मा० अम्मा—प्रबन्ध की चिन्ता मत करो, प्रफुल्ल बाबू। हमारे ही घर में सब ठीक हो जायेगा। माँ को ज़रूर कोचिन भेजने का कार्य-क्रम बनाओ।

नि० देवी—भगवान् करे, यहाँ पूर्णतः स्वस्थ हो जाऊँ; और आपके यहाँ कभी स्वस्थ स्थिति में आऊँ। (शैल से) चाय ला कर पिलाओ न बेटी।

माधवी अम्मा ने यह कह कर शैला को रोकना चाहा कि अभी ही सब नाश्ता कर के आ रहे हैं। लेकिन शैला यह कह कर चली गई कि 'नहीं थोड़ी लीजिये।'

देवेन्द्र ने कहा—"पिता जी, प्रफुल्ल फुटबॉल और क्रिकेट के बड़े अच्छे खिलाड़ी हैं। कितने ही मैचों में पुरस्कार पाये हैं।

प्रफुल्ल—लेकिन मुझे तो वे दिन नहीं भूलते जब हम मद्रास में साथ-साथ रहते, पढ़ते और शाम को समुद्रतट पर बैठे-बैठे मूँगफली और कडला पट्टानी (चने और मटर) पर हाथ साफ करते हुए दुनिया की सब समस्याओं पर चर्चा किया करते थे। किसी भी विषय पर देवेन्द्र के साथ मेरे विचार नहीं मिलते थे। हमारी गरमा-गरम बहस देख कर दूसरे साथी हमें पागल ही समझते थे।

इतने में चाय आ गई। सब चाय लेने लगे।

नि० देवी—(माधवी अम्मा से) प्रफुल्ल और देवेन्द्र में बहुत स्नेह भाव है, बहन। देवेन्द्र को पहले पहल मैंने बंगलोर में देखा था जब कि वह प्रफुल्ल के साथ हमारे यहाँ आया था। ऐसा नहीं मालूम हुआ कि दोनों भाई नहीं हैं।

कुछ देर और बात-चीत चलती रही। जब सब जाने के लिये उठे तब शैला ने कहा, "सरला दीदी और सुधा दीदी को अभी रहने दें। ये बाद को जायेंगी।"

मा० अम्माँ—जैसी तुम्हारी इच्छा।

प्रोफेसर—देवेन्द्र, तुम भी सरला और सुधा के साथ आना। हम दोनों चले जायेंगे। कहते हुए फिर आने की बात कह कर प्रोफेसर और माधवी अम्माँ निरुपमा देवी से विदा लेकर चले गये।

× × ×

शैला को सरला और सुधा से परिचय प्राप्त कर के बहुत आनन्द हुआ। उसने दोनों को ले जाकर सारा घर दिखाया। घर एक छोटा दो मंजिला मकान था। ऊपर-नीचे दो हॉल और दोनों बाजू में दो कमरे थे। सामने बरामदा था और पिछवाड़े में रसोई घर वगैरह। निरुपमा देवी अस्वस्थता के कारण नीचे के ही कमरे में शैला के साथ रहती थीं।

छोटा होने पर भी घर की सफाई और व्यवस्था चित्त को प्रसन्न करने वाली थी। ऊपर के हॉल में दीवारों पर प्राकृतिक दृश्य के दो-तीन चित्र टँगे थे। एक कमरे में एक अलमारी में सजा कर कुछ चुनी हुई पुस्तकें रखी थीं और दूसरे को प्रफुल्ल का शयनागार बना दिया गया था। जब सरला और सुधा पुस्तकें देख कर हॉल में आईं तब तक देवेन्द्र और प्रफुल्ल भी ऊपर आ गये। सरला ने कोने में रखे एक छोटे हाथी दाँत के बने ताजमहल के नमूने को देख कर कहा, "कितना सुन्दर यह नमूना है! और संगमरमर की बनी तिपाई से इसका कितना मेल खाता है!"

देवेन्द्र—दुनिया में ताजमहल को प्रेम का प्रतीक माना गया है। देखने में यह जितना ही धवल, पवित्र और कला पूर्ण है उतना ही हृदय को पुलकित करने वाला भी है।

सुधा—आगरा जा कर ताजमहल देखने की मेरी बड़ी इच्छा है।

प्रफुल्ल—(सुधा की ओर गौर से देखते हुए) ज़रूर देखना चाहिये। उत्तर भारत के ऐतिहासिक स्थानों को देखने का एक कार्य-क्रम बनाइये। अक्टोबर-नवम्बर का महीना बड़ा अनुकूल होगा। मेरा सबों को निमंत्रण है।

देवेन्द्र—इस निमंत्रण का फायदा मैं तो ज़रूर उठाऊँगा। सरला, तुम्हारा क्या विचार है? सुधा तो जायेगी ही।

सरला—अक्टोबर-नवम्बर अभी बहुत दूर है। जब समय आयेगा तब देखा जायेगा।

जाने के पहले सरला और सुधा निरुपमा से विदा लेने के लिये उनके कमरे में आईं। सुधा ने एक कोने में मेज पर रखी एक वीणा देखी और शैला से पूछा, "आप वीणा बजाती हैं?"

निरुपमा देवी ने जवाब दिया, "शैला को बचपन से ही संगीत से प्रेम है। क्या तुम भी जानती हो?

सरला—सुधा अच्छा गाती है। वीणा बजाने का भी थोड़ा अभ्यास किया है।

शैला—तब तो सुधा दीदी का गाना हम जरूर सुनेंगे। कल आप जरूर आइये और हमको कुछ सुनाइये।

सरला—क्यों नहीं? सुधा जरूर आयेगी।

निरुपमा—आना बेटी। हमको बहुत प्रसन्नता होगी।

देवेन्द्र और प्रफुल्ल हॉल में खड़े-खड़े बातें सुन रहे थे। प्रफुल्ल ने सबेरे कोमल-विलास में सुधा को जब देखा तभी उसे ऐसा लगा कि वह कोई परिचित छवि देख रहा हो। तभी से सुधा की मूर्ति उसके मन में बस गई। अब उसके संगीत-प्रेम की बात जब सुनी तब उसके हृदय में हर्ष की एक लहर दौड़ गई।

हॉल में आते ही सुधा की आँखें प्रफुल्ल की उत्सुक मुस्कराती आँखों से मिलीं और नीचे झुक गईं मानों कुछ छिपाने के लिये सतर्क हो गईं।

प्रफुल्ल ने तीनों को विदा करते हुए कहा, "सुधा जी तो कल आयेंगी ही।"

"कोशिश करूँगी", एक मुस्कराहट के साथ सुधा ने उत्तर दिया।

: २ :

सरला ने घुड़सवारी सीखने की इच्छा जब पहले-पहल प्रकट की तब देवेन्द्र ने उसे उतना महत्त्व नहीं दिया था। लेकिन जब उसने सलवार, कुर्ता सिलवा लिया तब उसे विश्वास हो गया कि वह सचमुच सीखना चाहती है।

प्रफुल्ल के यहां से लौटने पर देवेन्द्र ने कोमल-विलास के मैनेजर से दो घोड़ों का प्रबन्ध कर देने की बात की।

देवेन्द्र और सुधा दोनों बातें करते हुए फुलवाड़ी में घूमने लगे। सुधा ने अगले दिन घोड़ों के लाये जाने की बात सुनी तो कहा, "मैं तो घुड़सवारी नहीं सीखूँगी। मैंने सिर्फ सरला का उत्साह बढ़ाने के लिये 'हाँ' कर दी थी।"

देवेन्द्र—सरला के मन में जो आता है, कर के ही छोड़ती है। उसकी सब बातें निराली होती हैं। पता नहीं वह क्या-क्या सोचती रहती है।

सुधा—एक बात तो साफ है। उसका मन बहुत दूर की बातों में उलझा रहता है। पर अभी तक उसे यह स्पष्ट नहीं हुआ है कि उसे अपने जीवन में क्या करना है।

"क्या अविवाहित रहने का अपना हठ नहीं छोड़ेगी?"

"कौन जाने अन्त में क्या करेगी?"

"मेरे लिये कुछ आशा नहीं है, सुधा ?"

"आशा क्यों छोड़नी चाहिये ?"

देवेन्द्र ने आतुरता भरे स्वर में कहा, "सुधा, तुम्हारे ये शब्द मुझे आशान्वित बनाने वाले हैं। मैं तुम्हारा बहुत कृतज्ञ हूँ।"

सरला उसी समय उनकी तरफ आ रही थी। उन दोनों की अंतिम बातें सुन कर उसके हृदय में एक तूफान-सा मच गया। वह चुपचाप लौट जाने के लिये मुड़ी। लेकिन देवेन्द्र ने देख लिया और कहा, "क्यों लौटी जा रही हो सरला ? हम तभी से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम्हें एक खुशखबरी सुनानी है।"

सरला पास चली आई और तीनों घूमने के लिये चल पड़े।

"कल सवेरे दो घोड़े आ जायेंगे। तैयार रहोगी न ?"

"तैयार क्यों नहीं रहूँगी ? मैं तो सोच रही थी कि आप उसके बारे में भूल ही गये। सुधा, तुम्हारे लिये भी सलवार कुर्ता सिलवा लाई हूँ।"

देवेन्द्र ने कहा, "लेकिन दोनों एक साथ तो नहीं सीख सकतीं। एक को सिखा चुकने के बाद ही दूसरी को सिखाऊँगा !"

सुधा—पहले सरला को ही सिखाइये। मुझे तो निरुपमा देवी ने बुलाया है।

सरला ने देवेन्द्र से कहा, "आपके मित्र प्रफुल्ल घोष और उनकी माता और बहन बहुत अच्छे आदमी मालूम होते हैं। मुझे बहुत पसन्द पड़े।

देवेन्द्र—लेकिन सरला ! भाई और बहन-दोनों की अपनी-अपनी करुण कहानी है जिससे सबों पर विषाद की एक छाया छाई रहती है।

सरला—सो क्या ?

देवेन्द्र—शैला का पति एक बड़ा ज़मींदार है ! लेकिन तीन साल पहले शैला अपने पति के यहाँ से चली आई और तब से माँ के साथ ही रहती है ।

सुधा—कारण ?

देवेन्द्र—शैला के पति को धन से प्राप्त सब सुविधायें हैं । कहा जाता है कि वह बड़ा विलासी है । शैला जैसी सुसंस्कृत और सुन्दर पत्नी के रहते हुए भी उसने दूसरा विवाह कर लिया और शैला को परित्यक्ता का जीवन बिताने पर बाध्य होना पड़ा है ।

सरला—पुरुष इतने स्वार्थी हो सकते हैं, यह देख कर बड़ा आश्चर्य होता है । उन्हें सब तरफ से छूट मिली हुई है कि वे जो चाहें सो करें । स्त्री उनके लिये मनोरंजन की भावशून्य सामग्री है । पता नहीं, यह स्थिति कब सुधरेगी ?

देवेन्द्र—ऐसी कुरीतियों को दूर करने के लिये आन्दोलन तो हो ही रहे हैं । कानून भी बनते जा रहे हैं ।

सरला—मेरा तो विश्वास है कि स्त्री वर्ग की समस्यायें तब तक दूर नहीं होंगी जब तक उनका हल निकालने में स्त्रियों का पूरा हाथ न रहे । केवल पुरुषों के प्रयत्न से और कानून बनाने से स्त्रियों की हालत नहीं सुधर सकती ।

देवेन्द्र—तुम्हारा कथन अक्षरशः सत्य है । स्त्रियों में जैसे-जैसे शिक्षा बढ़ेगी और वे समझदार बनेंगी वैसे-वैसे समाज की हालत भी सुधरने लगेगी ।

सरला—मैं ऐसा नहीं मानती कि शिक्षा प्राप्त कर लेने से ही स्त्रियों की सारी कठिनाइयाँ और विपदायें दूर हो जायेंगी । स्त्रियों की समाज में जो हीनावस्था है उसका कारण उनके अज्ञान के साथ-साथ उनका आर्थिक परावलम्बन भी है । लेकिन उनकी आर्थिक

समानता और स्वतंत्रा की तो कोई बात ही नहीं उठाता। निस्सन्देह जिस समाज में स्त्रियों को आर्थिक समानता प्राप्त है वहाँ उनकी हालत इतनी खराब नहीं है।

वे बातें करते हुए कोमल-विलास के अहाते में वापिस आ गये। सुधा ने देवेन्द्र से पूछा "प्रफुल्ल घोष के बारे में भी तो आप कुछ कहने वाले थे।"

देवेन्द्र ने कहा, "प्रफुल्ल की कहानी संक्षेप में यही है कि उसका जिस लड़की से विवाह होना निश्चित हुआ था, उसका विवाह के कुछ ही दिन पहले मियादी बुखार से देहान्त हो गया। प्रफुल्ल उसे बहुत प्यार करता था। उसकी मृत्यु से उसके दिल पर गहरा आघात हुआ तब से वह अपनी वेदना हृदय में छिपाये निराशा का जीवन बिता रहा है।"

"दिल का दर्द सब दर्दों से गहरा होता है," सुधा ने कहा।

उस समय चाँदनी खूब छिटक रही थी। तीनों एक बेंच पर बैठ गये और अपने-अपने विचारों में डूब गये। थोड़ी देर बाद सुधा वहाँ से चली गई। देवेन्द्र ने स्तब्धता भंग करते हुए कहा, "एक बात पूछूँ सरला ?"

"पूछिये। क्या बात है ?"

"बुरा तो नहीं मानोगी ?"

"बुरा क्यों मानूँगी ?"

देवेन्द्र ने उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा, "कहो सरला, तुम मुझसे घृणा करती हो ?"

सरला को देवेन्द्र के प्रश्न और ध्वनि में एक विह्वलता मालूम हुई। लेकिन उसने सहज भाव से उत्तर दिया, "क्यों देवेन्द्र, यह प्रश्न ही क्यों ? आपको मालूम ही है कि मेरे न कोई बहन है न भाई। बहन का अभाव सुधा दूर करती है और भाई का अभाव आप दूर करते हैं।

आप दोनों को पाकर मैं सुख-ही-सुख का अनुभव करती हूँ ' तब आप से मुझे घृणा कैसे हो सकती है ?"

देवेन्द्र थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोला, "सरला । मनुष्य एक निर्बल प्राणी है । वह सहारा खोजता है । प्रेम का, स्नेह का, विश्वास का ।.. क्या समय हुआ ?"...कहते-कहते उसने सरला का हाथ पकड़ लिया और चाँदनी में उसकी कलाई की घड़ी देखने लगा ।

"चलिये, अन्दर चलें । सब प्रतीक्षा कर रहे होंगे, सरला ने सकुचा कर कहा ।

: ३ :

दूसरे दिन सवेरे सुधा उठ कर जब सरला के कमरे में गई तब उसे वहाँ नहीं पाया । बाद को पता लगा कि देवेन्द्र भी अपने कमरे में नहीं हैं । लोगों ने सोचा, दोनों खूब तड़के उठ कर घूमने निकल गये होंगे । सुधा के मन में यह विचार उठा कि दोनों निर्विघ्न रूप से कुछ बातें करने के लिये बाहर चले गये होंगे । लेकिन जब फाटक पर देवेन्द्र को अकेले लौटते देखा तब वह चकित हुई और उसके नज़दीक आते ही पूछा, "देवेन्द्र, सरला कहाँ है ?"

"क्यों, घर में नहीं है ? मैं तो थोड़ा घूमने निकल गया था । घुड़सवारी के लिये निकलने की तैयारी में लगी होगी ।"

"नहीं, वह घर में नहीं है ?"

"तब कहाँ होगी ?"

"कहीं वह भी घूमने तो नहीं निकल गई है ?"

"मैं जा कर बाहर देखता हूँ ।"

देवेन्द सरला की खोज में बोटैनिकल गार्डेन्स की तरफ चल पड़ा । उसके मन में काफी घबराहट पैदा हो गई । सोचने लगा "वह भी मेरी ही तरह रात भर अनिद्रित तो नहीं रही ?...क्या कल की मेरी बातों ने

उसे अप्रसन्न कर दिया !......ओह, यह शून्य और अन्धकारमय जीवन कब तक ढोना पड़ेगा !"

बोटैनिकल गार्डेन्स पहुँचने पर उसने देखा, सरला एक कुंज में विचारमग्न बैठी है। सरला ने भी पैर की आहट पाकर सिर उठाया तो देवेन्द्र को अपनी ओर आते देखा। वह उठ कर खड़ी हो गई और बोली, "मुझे समय का कुछ ख्याल ही नहीं रहा।"

"तबीयत तो ठीक है ? घर पर सब परेशान हैं कि तुम कहाँ हो !"

सरला ने हँसते हुए जवाब दिया, "बहुत सबेरे नींद टूट गई। बिस्तरे पर पड़े-पड़े जब उकता गई तो सोचा जरा घूम ही क्यों न आऊँ। सब सोये हुये थे। घोड़े आज आ जायेंगे न ?

देवेन्द्र को लगा कि सरला कुछ छिपा रही है। जब दोनों कोमल-विलास पहुँचे तब सुधा ने सरला से कहा, "मैं तो डरी कि कोई तुम्हें रातों-रात उठा तो नहीं ले गया।" इस पर सबों ने खूब कह-कहा लगाया।

थोड़ी देर में दो घोड़े आ गये। सरला तैयार हो कर निकली और देवेन्द्र के कन्धे का सहारा लेकर एक पर चढ़ने के लिये रकाब में पाँव रखने लगी।

देवेन्द्र ने कहा, "देखो, घोड़ा भी पुचकार पसन्द करता है। चढ़ने के पहले पुचकार देना चाहिये। नहीं तो कभी-कभी शरारत करने लगता है।"

घोड़े को हल्की थपकियाँ देने और पुचकारने के बाद देवेन्द्र ने सरला को घोड़े पर चढ़ा दिया और स्वयं उछल कर दूसरे घोड़े पर बैठ गया।

सरला का घुड़सवारी का अभ्यास शुरू हो गया।

× × ×

माधवी अम्माँ—कैसा पागलपन सिर पर सवार हो गया है। भला घुड़सवारी सीख कर क्या करेगी ?

प्रोफेसर—जानती हो कि मैं सरला को क्यों किसी काम से नहीं रोकता ?

मा० अ०—सो तो नहीं जानती। लेकिन इतना जानती हूँ कि इसका नतीजा क्या हुआ है ?

प्रो०—देखो, माधवी, मुझे इसका पूरा विश्वास है कि सरला कोई ऐसा काम कभी नहीं करेगी जो अयोग्य हो, अनुचित हो। उसका मन ऐसी बातों की तरफ जायेगा ही नहीं, जो अभद्र हों।

मा० अ०—घुड़सवारी जैसी बातें अभद्र भले ही न हों, निष्प्रयोजन तो हैं ही।

प्रो०—प्रयोजन से तुम्हारा क्या मतलब है ? क्या हर बात का प्रयोजन ठोस लाभ में ही कूता जाता है ? संगीत, नृत्य इत्यादि ललित-कलाओं को निष्प्रयोजन कहकर छोड़ा जा सकता है ?

मा० अ०—ललित कलाओं की बात मैं थोड़े ही कहती हूं ! मेरा तो अभिप्राय घुड़सवारी जैसे काम से है, जो पुरुष को ही शोभा दे सकते हैं।

प्रो०—जिस प्रकार ललित कलाओं की साधना मनुष्य को एक विशेष प्रकार का आनन्द देती है जो उसे जीवन की सीमाओं का अतिक्रमण करके सूक्ष्म जगत की सुन्दरता, निस्सीमता और अगाधता का दर्शन कराता है ; उसी तरह शारीरिक शौर्य के काम में भी एक तरह का आनन्द आता है। मनुष्य का सच्चा आनन्द आत्माभिव्यक्ति में है। वह चाहे ललित कलाओं के द्वारा हो, चाहे सेवा कार्य द्वारा, चाहे शौर्य पूर्ण कार्यों द्वारा।

मा० अ०—शौर्यपूर्ण कार्य के विरुद्ध कौन है ? पर शारीरिक शौर्य के काम पुरुषों को ही फबते हैं। स्त्रियों के लिये ललितकलायें और सेवा के कार्य ही ठीक हैं।

प्रो०—स्त्री या पुरुष होना एक बात है। स्त्रियोचित या पुरुषोचित गुण रखना दूसरी बात है। एक स्त्री, स्त्री-रूप-धारी होकर भी स्त्रियोचित गुणों से रहित हो सकती है; इसी तरह एक पुरुष भी पुरुषोचित गुणों से रहित हो सकता है। स्त्रियोचित गुणों से प्रेम, दया, सेवा और क्षमा आदि का बोध होता है; और पुरुषोचित गुणों से निर्भयता, साहस, पराक्रम और विजय का बोध होता है। लेकिन ये गुण ऐसे नहीं है जो सिर्फ स्त्री में ही रहें, या सिर्फ पुरुष में ही रहें। जीवन की पूर्णता के लिये दोनों प्रकार के गुणों की आवश्यकता है। स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण के मूल में यही तत्व काम करता है। और इसी से एक दूसरे का पूरक होकर जीवन की पूर्णता प्राप्त करने की प्रवृत्ति उनमें पाई जाती है।

मा० अ०—ठीक है, स्त्री-पुरुष अपने-अपने गुण विकसित करके अवश्य एक-दूसरे के पूरक बनें। पर अपनी विशेषता न खोवें।

प्रो०—विशेषता खोने का प्रश्न नहीं है। प्रश्न है कि क्या पुरुष केवल पुरुषोचित गुण ही रखे और स्त्री केवल स्त्रियोचित गुण ही, या दोनों एक-दूसरे के गुणों को भी अपने में विकसित करें?

मा० अ०—मेरा मतलब यह नहीं है कि पुरुष ललितकलाओं (स्त्रियोचित समझे जाने वाले गुणों) को अपने में विकसित न करें। मैं यह भी नहीं कहती कि लड़कियों को अपने शरीर को पुष्ट बनाने वाले साधारण खेल-कूद में भाग नहीं लेना चाहिये। पर घोड़े पर चढ़ना, हवाई जहाज चलाना और युद्धभूमि में जाना—ऐसे काम पुरुषों के लिये ही रहने देना ठीक है।

प्रो०—वास्तव में ये काम ऐसे हैं कि सब पुरुष भी इन्हें नहीं कर सकते। क्योंकि इनके लिये शारीरिक बल से भी बढ़कर मानसिक बल और दृढ़ता की आवश्यकता है। क्या तुम यह मानती हो कि मानसिक बल और दृढ़ता के गुण केवल पुरुषों में ही होते हैं?

मा० अ०—नहीं। लेकिन स्त्री के लिये उनके उपयोग का क्षेत्र गृह है, परिवार है । अधिक से अधिक स्त्रियाँ सार्वजनिक सेवा क्षेत्र में कार्य करें।

प्रो०—सुनो, आज का जीवन पहले जैसा नहीं रहा कि परिवार और समाज, गृह और युद्ध-क्षेत्र में काम करने वालों का वर्गीकरण किया जा सके। प्राचीन काल की तरह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्री-पुरुष का अलग-अलग क्षेत्र मान कर चलना आज के जटिल समाज में व्यवहार्य नहीं है। आज परिस्थिति मानव मात्र की—बिना किसी भेदभाव के—समानता को स्वीकार करने के लिये बाध्य करती है। कोई भी क्षेत्र हो—चाहे वह व्यक्तिगत सुख—सुविधा का हो, चाहे सार्वजनिक सेवा का हो, आज स्त्री पुरुष में भेद नहीं किया जा सकता। आज सुख की इच्छा या आत्माभिव्यक्ति की प्रेरणा पूर्णतः न्यायसंगत मानी जाता है। आज का युग स्वतन्त्र विचार, स्वेच्छानुसार कार्य और निर्विघ्न सुखोपलब्धि का समर्थक है। इसकी सीमा सिर्फ यही है कि इससे दूसरों के अधिकारों पर आघात नहीं होना चाहिये। हमारी सरला में स्त्रियोचित गुणों के साथ-साथ पुरुषोचित गुणों का भी विकास हुआ है। घुड़सवारी की तरफ उसका उत्साह उसी का फल है। शौर्य और पराक्रम का कार्य करने वाली स्त्रियों के दृष्टान्त का हमारे देश में कभी अभाव नहीं रहा है। घुड़सवारी की भी बात लें तो झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की याद तो ताज़ी ही है। इसलिये सरला को निरुत्साहित नहीं करना चाहिए।

पाँचवाँ भाग

: १ :

सरला का नित्य सवेरे का काम घुड़सवारी सीखने जाने का था ; तो सुधा का काम निरुपमा देवी के यहाँ जा कर वीणा का अभ्यास करना था ।

निरुपमा देवी और शैला वीणा बजाने की कला में निपुण थीं । सुधा ने उनसे कई नई चीजें सीखीं । और उन दोनों से उसका स्नेह भी खूब बढ़ गया । अभ्यास के बाद वह माँ-बेटी के साथ प्रायः थोड़ी देर गपशप भी कर लिया करती थी, जिसमें कभी-कभी प्रफुल्ल भी शरीक हो जाया करता । इधर चन्द दिनों से प्रफुल्ल नियमित रूप से बात-चीत में भाग लेने लगा है । सच तो यह है कि सुधा की तरफ उसका आकर्षण बढ़ता जा रहा था । और वह रोज उसके आने की उत्सुक प्रतीक्षा में रहा करता था ।

आज की बात-चीत के सिलसिले में उसने सुनाया कि केरल से कथकली नर्तकों का एक दल ऊटी आया हुआ है । पिछली रात को सिनेमा हाल में उनका नृत्य हुआ ।

सुधा —आपको पसन्द आया ?

प्रफुल्ल—मेरे मत में कथकली का पूरा आनन्द आम लोग जो नृत्य की कहानी और कथकली की 'टैकनिक' नहीं जानते, नहीं ले सकते । मूक अभिनय, आँखें, भौंह और उँगलियों की भाषा और मुख की भावभंगी समझने और उसका पूरा आनन्द लेने के लिये इस कला का थोड़ा पूर्वपरिचय और कुछ हद तक कला-मर्मज्ञता आवश्यक है ।

सुधा—आपने केरल का संदर्शन तो किया ही होगा।

प्रफुल्ल—हाँ, एक बार मौका मिला था। मद्रास से विद्यार्थियों के दल में गया था। हमारे प्रिन्सिपल ने ट्रावनकोर और कोच्चिन की सरकार को लिख कर सब दर्शनीय स्थान हम लोगों को दिखा देने का प्रबन्ध कर दिया था।

सुधा—आपको कैसा लगा?

प्रफुल्ल—वहाँ अन्य प्रान्तों की तरह घने बसे हुए गाँव नहीं मिलते। अलग-अलग अहाते के साथ घर बनाने की प्रथा है। वह मुझे बहुत पसन्द आया। पर वहाँ की जो चीज़ बाहर के संदर्शकों को मुग्ध कर लेती है वह है वहाँ का प्राकृतिक दृश्य। उत्तर और दक्षिण ध्रुव के बीच जल और थल को मिलाने वाले कन्या कुमारी के छोर पर खड़े होने पर मुझे ऐसा लगा मानों अनन्त का दर्शन हो रहा है। फिर वहाँ की पर्वत मालाएँ, झील, नारियल के बाग और धान के खेत-सब चित्त चुराने वाले होते हैं।

सुधा—केरल एक धनी प्रदेश नहीं है। वहाँ आपको बड़े-बड़े शहरों की तड़क-भड़क देखने को नहीं मिली होगी।

प्रफुल्ल—लेकिन प्रकृति की रमणीयता, सरलता और स्वच्छन्दता की छाप वहीं नर-नारियों के जीवन पर देखने को मिलती है। भले ही केरल में बड़ी-बड़ी मिलें और कारखाने न हों, बड़े-बड़े पूंजी-पति और अट्टालिकायें न हों, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उस प्रदेश के खेतों और बागों तथा पर्ण-कुटियों में एक परिष्कृत संस्कृति का वास है जिसकी झलक वहाँ के लोगों की सादगी, सफाई, सुरुचि और शिष्टता में पाई जाती है।

सुधा—मैं नहीं जानती थी कि आप केरल के इतने बड़े प्रशंसक हैं।

प्रफुल्ल—मुझे इतने साल के बाद भी वह रात नहीं भूली है जब कि हम लोग वहाँ की पतली, नुकीली लम्बी-लम्बी नावों पर वेम्पनाड झील में नौका विहार के लिये निकले थे। नील वर्ण अनन्त आकाश के वक्षस्थल से झाँकता हुआ पूर्णिमा का चाँद अमृत और प्रकाश की वर्षा कर रहा था और चारों तरफ विस्तृत जल राशि एक सफेद चादर का रूप धारण कर दमक-दमक कर अपूर्व भावनाओं की सृष्टि कर रही थी। उस समय नाविकों का नौका गान जब शुरू हुआ तब ऐसा लगा मानों हम स्वप्न लोक में पहुँच गये हैं। उस समय की अनुभूति का वर्णन करना मेरे लिये असम्भव है।

सुधा—वाह, आपने तो कविता की धारा बहा दी। आपके मुँह से अपने प्रदेश के बारे में बातें सुनना बड़ा आनन्ददायक मालूम होता है। आपको वहाँ के लोगों के घरेलू जीवन को देखने का अवसर शायद नहीं मिला होगा!

प्रफुल्ल—मिला। कोच्चिन की राजधानी में मेरे एक सहपाठी का घर है। घर का नाम तंगश्शेरी है। मैं उन्हीं के यहाँ ठहरा था। ओणम् × का अवसर था।

× ओणम् केरल का एक प्रधान त्योहार है जो भादों के महीने में श्रावण (तिरुवोणम्) नक्षत्र के दिन मनाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि उस दिन राजा महाबलि, जिन्हें विष्णु भगवान् ने वामनावतार धारण कर उनकी सारी भूमि दान में पाकर पाताल भेज दिया, लेकिन जिनका प्रजा प्रेम देख कर वर्ष में एक बार आकर अपनी प्रजा को देख जाने की अनुमति दी,—का आगमन होता है। उसके उपलक्ष में लोग अच्छी तरह खाते-खिलाते और आश्रितों को वस्त्र भेंट करते हैं जिससे महाबलि उन्हें सुखी देख कर प्रसन्न हों।

सुधा—कहिये, कहिये, मैं उस परिवार को जानती हूँ।

प्रफुल्ल—घर का वातावरण, रहन-सहन की सुघड़ता, स्त्रियों का पर्दा प्रथा से मुक्त जीवन, उनके धवल वस्त्र, खुले लम्बे बाल, स्वल्प आभूषण और निर्भय, शान्त एवं प्रसन्न मुद्रा-ये सब अनायास बाहर के एक यात्री को मुग्ध कर लेते हैं।

सुधा—आपको मालूम नहीं है, केरल में स्त्रियों को पुरुषों के बराबर ही अधिकार प्राप्त हैं? घर में लड़कों और लड़कियों को सम्पत्ति का बराबर-बराबर भाग मिलता है।

प्रफुल्ल—वहाँ जाने के बाद सब मालूम हो गया। यह भी मालूम हो गया कि कुल भी स्त्रियों से चलता है।

सुधा—आपने बिलकुल ठीक समझा है। केरल के नायर समाज में कन्या की सन्तान ही कुल का अंग मानी जाती है। पुत्र की सन्तान नहीं। विवाह के बाद भी कन्या माँ के ही कुल का अंग बनी रहती है।

निरुपमा देवी—तब क्या लड़कियाँ विवाह के बाद पति के घर नहीं जातीं?

सुधा—हमारे समाज में लड़की का पति के घर में कोई हक नहीं है। ऐसे आना-जाना हो सकता है।

प्रफुल्ल—मुझे स्मरण है, मद्रास में केरल का एक राज परिवार रहता था। मेरे पिता जी की उन लोगों से मित्रता थी। उनके यहाँ राजा की पत्नी को रानी नहीं कहते थे। राजा की बहनें रानी कहलाती थीं।

सुधा—क्या आप राजा हों तो नहीं चाहेंगे कि शैला रानी कहलावे?

प्रफुल्ल—लेकिन यह कौन पसन्द करेगा कि राजा कहलाने वाले की पत्नी रानी न कहलावे?

निरुपमा देवी और शैला प्रफुल्ल की अन्तिम बात सुन कर सुधा के साथ खिल-खिला कर हंस पड़ीं।

प्रफुल्ल ने आगे कहना शुरू किया, "लेकिन नम्बूदिरी ब्राह्मणों के बारे में और भी दिलचस्प बातें सुनने को मिलीं। उनके यहाँ स्त्रियाँ पर्दा में ही रहती हैं। बाहर निकलते समय ताड़ की छतरी से ओट कर के चलती हैं। बड़ा लड़का ही अपनी जाति में विवाह कर सकता है।"

सुधा—इसके पीछे एक पुराना इतिहास है। सदियों पहले नम्बूदिरियों ने अपने कुल की सम्पत्ति को बंटवारे के कारण बिखर जाने से बचाने के लिये ही केवल बड़े लड़के के स्वजाति में विवाह करने का नियम बनाया और अन्य पुत्रों के लिये नायर और क्षत्रिय कुलों में अनुलोम विवाह सम्बन्ध जोड़ने की प्रथा चलाई। इसी के फलस्वरूप केरल के नायर और क्षत्रिय समाज में मातृकुल पद्धति× चल पड़ी।

निरुपमा देवी—क्या आज भी पुरानी प्रथा के अनुसार ही शादी ब्याह होता है?

सुधा—उत्तराधिकार के मामले में तो कोई फर्क नहीं हुआ है। लेकिन अब विवाह-शादी के सम्बन्ध में अधिक स्वतंत्रता से काम लेने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। नये कानून बना कर स्त्रियों की आर्थिक स्थिति और भी अच्छी बना दी गई है। पहले स्त्री को पति की उपार्जित सम्पत्ति में भी कानूनन कोई हक नहीं था। अब नये कानून के अनुसार वह मातृकुल में अपना पूरा हक रखने के साथ-साथ पति की उपार्जित सम्पत्ति में भी कम-से-कम आधे हिस्से की अधिकारिणी बना दी गई है।

× इस पद्धति को मरुमक्कत्तायम (मातृकुलपद्धति) कहते हैं।

: २ :

सुधा निरुपमा देवी के घर से और दिनों की अपेक्षा अधिक प्रसन्न भाव से कोमल-विलास लौटी। उस दिन की बात-चीत से प्रफुल्ल एक नये रूप में उसके सामने प्रकट हुआ था। पहले वह एक बन्द पुस्तक जैसा ही था। वैसे तो उसमें एक स्वाभाविक आकर्षण था और उसका गौर वर्ण, चेहरे की तेजस्विता और घुंघराले बाल उसके एक कलाकार होने की घोषणा करते थे। पर आज उसने अपनी बात-चीत से सुधा को विशेष रूप से प्रभावित कर दिया।

कोमल-विलास पहुँचने पर सुधा ने देखा कि सरला और देवेन्द्र वापिस आ गये हैं। उसने सरला से पूछा, "आज तुम लोग इतना पहले कैसे लौट आये?"

सरला ने कहा, "पहले तुम कहो, लौटने में इतनी देर क्यों हुई? मेरा तो आज परीक्षा का दिन था। देवेन्द्र ने मौखिक प्रमाण-पत्र भी दे दिया है कि मैं उत्तीर्ण हो गई हूँ।...अब तुम्हारी बारी है।"

सुधा ने कहा, "मेरी बात छोड़ दो। मुझे तो ६ महीने में भी घोड़े पर चढ़ना नहीं आयेगा। मेरा सन्तोष इसी में होगा कि ऊटी में आकर तुमने घुड़सवारी सीखी तो मैंने वीणा बजाने का अपना अभ्यास बढ़ाया।"

सरला—कल हम लोग एक लम्बे चक्कर के लिये जाना चाहते हैं। हमारा वन-भोजन भी बाहर ही होगा। अगर तुम भी साथ रहती तो कितना आनन्द आता!

सुधा—मुझे किन-किन बातों में अपने साथ रखोगी सरला! मुझे अपना वीणा का अभ्यास जारी रखने दो।—इतना कह कर सुधा ने सरला की ठुड्डी पकड़ कर हिला दी और अपने हृदय में हिलोरें लेती हुई प्रसन्नता को प्रकट कर दिया।

भोजन के बाद जब सरला आराम करने जा रही थी तब सुधा ने उसको कमला का एक पत्र लाकर दिया, और कहा, "देखो, कमला तुम्हारे बारे में क्या-क्या पूछती है!" सुधा चली गई। सरला ने उसे पढ़ा और कमला को एक पत्र लिखने बैठी।

कोमल विलास,
ऊटी, १० मई १९४२

प्यारी कमला,

बहुत दिनों के बाद आज तुम्हें पत्र लिखने बैठी हूँ। ऐसे तो सुधा के पत्रों से तुम्हें सब समाचार मालूम ही होगा। अभी-अभी सुधा के नाम तुम्हारा पत्र देखा। मेरे बारे में तुम्हारी इतनी दिलचस्पी स्वाभाविक है। अब मैं समझ सकती हूँ कि तुम क्यों मेरे विचारों की खिल्ली उड़ाया करती थीं। पिछले दिनों मैं जिन अनुभवों से होकर गुज़री हूँ, उनको ध्यान में रखते हुए अब मैं कह सकती हूँ कि स्त्री-पुरुष एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं, और उनका परस्पर आकर्षण स्वाभाविक है। मैं कबूल करता हूं कि इस सम्बन्ध में मैं सर्वथा असाधारण नहीं हूं। नहीं, अब मुझे "थी" ही कहना चाहिये, क्योंकि अब मेरा विश्वास है कि मैं अपनी कमज़ोरी पर विजय पा गयी हूँ। आज सारी कहानी तुम्हें सुनाने का मन कर रहा है। अच्छा, अब सुनो।

एक बार पहले मैंने तुम्हें लिखा था कि सुधा और देवेन्द्र एक दूसरे की तरफ आकृष्ट होते मालूम हो रहे हैं। मैं उनकी मदद करना चाहती हूं। लेकिन थोड़े ही दिनों के बाद उनकी बढ़ती घनिष्ठता को देखकर मेरे मन में ईर्ष्या होने लगी। एक दिन तो रात भर मुझे नींद ही नहीं आई और मैं आत्म-विवेचना में लगी रही। आज तुम्हें यह लिखते मुझे बहुत हर्ष हो रहा है कि अब मेरे मन की सारी चंचलता दूर हो गई है, और अब मैं पूर्ण शान्ति का अनुभव कर रही हूँ।

मैं देवेन्द्र के प्रति अपनी भावनाओं की विवेचना करके इस परिणाम पर पहुँची हूँ कि मैं दिल से उन्हें प्यार तो करती हूँ, लेकिन मेरा प्रेम प्रतिफल चाहने वाला नहीं है। प्रेम का सम्बन्ध आत्मा से है ; तो वासना का शरीर से। वासना अग्नि की तरह है जो आहुति खोजती है। प्रेम निरन्तर प्रवाहित रहनेवाले निर्झर की तरह है। उसका धर्म दूसरों को शीतल और सुखी बनाना है। प्रेम दिव्य है, स्वयं परिपूर्ण है। वासना के वशीभूत हो मानव दानव हो जाता है। प्रेम से प्रभावित होकर वह देवतुल्य बन जाता है।

मैं मानती हूँ कि विवाह बन्धन में मनुष्य को वासना और प्रेम का समन्वय करने और वासना को परिमार्जित करके अपने दिव्य गुणों को विकसित करने का अनुकूल वातावरण प्राप्त होता है तथा वैवाहिक जीवन में मनुष्य आत्मोत्सर्ग का पाठ भी सीखता है, लेकिन विवाह हर स्त्री पुरुष के लिये, विशेषकर स्त्री के लिये अनिवार्य है, यह मैं मानने को तैयार नहीं हूँ।

यह धारणा और विधान कि स्त्री की रक्षा के लिये एक पति, एक संरक्षक अपरिवार्य है, मानव समाज की बर्बर अवस्था का अवशिष्ट चिह्न है। इसके परिणाम स्वरूप स्त्री पराश्रयी, निर्बल और भीरु हो गई है।

स्त्री भी मनुष्य है, उसमें स्त्रीत्व और मातृत्व के अतिरिक्त और भी गुण हैं जो समाज के लिये कम उपयोगी नहीं हैं—इस तथ्य की दुर्लक्ष्यता ही स्त्री की हीनावस्था का प्रधान कारण है।

जब मैंने पहले-पहल कहीं पढ़ा कि पुरुष की बेकारी कार्य के अभाव में है तो स्त्री की बेकारी विवाह के अभाव में है (man without work is unemployed ; woman without marriage is unemployed.), तभी मैंने इस मिथ्यावाद के विरुद्ध कदम उठाने का निश्चय कर लिया।

हां, कमला, आज मैं अपने को अपने निश्चय में पहले से अधिक दृढ़ पा रही हूँ। तुम्हें शायद मालूम ही होगा कि इधर पिछले ६ महीने के अन्दर मेरे विवाह के कितने ही प्रस्ताव आये, जिन सब को मैंने अस्वीकार कर दिया। कुछ ही दिन पहले उत्तर भारत के एक प्रान्त में कलक्टर के पद पर काम करने वाले एक सज्जन का, जो मेरे पिता जी के मित्र के पुत्र हैं, प्रस्ताव आया था। उन्हें भी नामंजूरी का जवाब भिजवा दिया है।

सुधा और देवेन्द्र के प्रति भी मेरा दिल साफ हो गया है और अब मैं उस दिन की प्रतीक्षा में हूं, जब ये दोनों एक सूत्र में बन्ध जायेंगे, और मैं उन्हें हार्दिक बधाइयां दे सकूंगी।

अपना कुशल मंगल लिखना।

सस्नेह तुम्हारी,
सरला

सरला ने इस पत्र को समाप्त कर आत्म-सन्तोष की एक लम्बी सांस ली।

: २ :

प्रफुल्ल स्वभाव से बहुत भावुक था। सुहासिनी की मृत्यु से उसको बड़ा गहरा धक्का लगा था। सुहासिनी कोमल कलिका जैसी मृदुल थी। जैसा नाम वैसा गुण, लजालू पर खुशमिजाज। वाणी से रस टपकता था। गाने से अमृत की वर्षा होती थी। कितनी बार सुरभित पुष्पों की मालायें बना-बनाकर प्रफुल्ल को दी थीं। उसके हाथ के बनाये रुमाल आदि आज भी उस के पास सुरक्षित रखे हुए हैं। प्रफुल्ल सुहासिनी की स्मृति में ठण्डी आहें भरा करता था।

सुधा में, पहली ही मुलाकात में, प्रफुल्ल को सुहासिनी की थोड़ी झलक दिखाई दी, और उसके मानस पटल पर सुधा का चित्र अंकित हो गया। सुधा का नाम, स्वभाव, गाना और बातचीत, सब प्रफुल्ल को प्रिय लगा, और वह उसकी स्मृति में विभोर रहने लगा।

सुधा के साथ आज की उसकी बातचीत ने उसका संकोच बहुत कुछ दूर कर दिया। वह एक आत्मीयता अनुभव करने लगा। जब सुधा जाने लगी तब प्रफुल्ल भी आज पहले-पहल उसके साथ हो लिया और थोड़ी दूर पहुँचा कर लौटा। लौटने के बाद ऊपर अपने कमरे में जाकर पड़ गया और एक गम्भीर चिन्तन में डूब गया। 'क्या सुधा के हृदय में उसके लिये स्थान हो सकता है ?'

× × ×

दूसरे दिन जब सुधा आई तब निरुपमा देवी ने कहा, "सुधा, आज 'शृङ्गार लहरी' गाकर सुनाओ।"

सुधा ने वीणा पर गाना शुरू किया। कण्ठ के माधुर्य, स्वर के तारतम्य, उंगलियों के थिरकने और अपनी तल्लीनता का उसने आज जैसा प्रदर्शन किया वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। ऐसा लग रहा था कि संगीत का मधुर निनाद आकाश में व्याप्त हो एक अजीब समाँ की सृष्टि कर रहा हो। सब आनन्द में डूब गये। जब गाना समाप्त हुआ तब निरुपमा देवी, शैला और प्रफुल्ल तीनों के मुंह से एक साथ "वाह, वाह" निकल पड़ा। निरुपमा देवी गद्‌गद् होकर बोलीं, "बेटी, बहुत अच्छा हुआ, बहुत आनन्दित हुई।" अपनी शिष्या की निपुणता देख वह आनन्द विह्वल हो रही थी।

प्रफुल्ल की हालत तो मन्त्र-मुग्ध की तरह हो गई थी। जब सुधा जाने के लिये उठी तब उसने कहा, "मैं कुछ नयी पुस्तकें लाया हूँ, सुधा। देखियेगा नहीं ?" और सुधा को ऊपर ले जाने के लिये आगे बढ़ा। जाते-जाते शैला से चाय लाने को कहता गया। ऊपर जाकर सुधा ने जब एक पुस्तक चुन ली तब प्रफुल्ल बोला, "क्या आप कल्पना कर सकती हैं कि आपका गाना कैसा जादू का-सा असर करनेवाला होता है ! आपके गाने में सौन्दर्य और आनन्द की एक

अपूर्व सृष्टि करने की शक्ति है । मैं हृदय से आपका अभिनन्दन करता हूँ ।"

"आप मेरी चापलूसी कर रहे हैं, प्रफुल्ल बाबू ।"

"नहीं सुधा देवी । मैंने जो कुछ कहा है वह एक सच्चे हृदय की अनुभूति की किंचित् अभिव्यक्तिमात्र है । आप स्वयं अपनी कुशलता से अनभिज्ञ हैं । ...लेकिन मैं कह सकता हूँ कि आप में वियोग और वेदना से शुष्क बने हृदय में भी एक मधुर धारा प्रवाहित कर देने की शक्ति है ।"

"आप सहृदय हैं । मुझे खुशी है कि आपको मेरा गाना पसन्द आया है ।"

"सहृदय क्या हूँ, भाग्यहीन हूँ, सुधा देवी । जब मैं अपने भावी सुख के सपनों का जाल बुन रहा था तभी एकाएक मेरे आशा-पुष्प पर तुषारापात हो गया और मैं शिकारी के तीक्ष्ण तीर से घायल एक हरिण की तरह दर्द और अश्रुपात में जीवन के बाकी दिन बिताने लगा ।"

"मैं आपकी दुखभरी कहानी सुन चुकी हूँ ।"

"आप सुन चुकी हैं ? तब जाने दीजिये । उसे दुहराकर मैं आपके दिल को नहीं दुखाऊँगा । ...उसके बाद मेरे पास विवाह के अनेक प्रस्ताव आये पर मेरा मन तैयार नहीं हुआ । ...लेकिन अब मेरी स्थिति बदल गई है । ...मैं जितना ही सोचता हूँ उतना ही अपने को खोया-खोया सा पा रहा हूँ ।"

सुधा सिर नीचे किये प्रफुल्ल की बातें सुन रही थी । प्रफुल्ल उसे चिन्तामग्न देखकर विह्वल होकर बोला, "मुझे लगता है, अपनी व्यथा आपको सुनाने का मेरा कोई हक नहीं था । लेकिन मैं अपने को रोक नहीं सका । आप से मेरी प्रार्थना है कि आप बुरा न मानें ।"

सुधा ने सिर उठाकर प्रफुल्ल की ओर देखा । सुधा की आंखों में करुणा और आर्द्रता थी । उसने कहा, "आप अपने ऊपर अन्याय

कर रहे हैं। आपने कुछ भी अनुचित नहीं किया है। आपकी स्थिति किसी को भी द्रवीभूत किये बिना नहीं रह सकती।"

सहृदयता भरे ये शब्द सुनकर प्रफुल्ल का चेहरा खिल उठा। वह बोला, "सुधा देवी, आपके इन शब्दों के लिये मैं आपका चिरकृतज्ञ रहूँगा। आपके ये शब्द तृषित के लिये अमृत की बूँद के सदृश हैं।

सुधा ने कहा, "सुधा ही कहिये। सुधा देवी कहकर इतनी दूरी दिखाने की ज़रूरत नहीं है। ...जिस दिन देवेन्द्र ने आपकी करुणकथा सुनाई, उसी दिन मेरे दिल में आपके लिये......।"

प्रफुल्ल—मेरे कान मुझे धोखा तो नहीं दे रहे हैं। क्या मेरा इतना बड़ा भाग्य हो सकता है कि मुझे आपकी सहानुभूति प्राप्त हो जाय?

सुधा—उल्टे मैं ही अपना भाग्य समझूँगी अगर मेरे कारण आपका दुख कुछ कम हो जाय!

प्रफुल्ल—सुधा, मैं जीवन से निराश हो गया था। तुम आशा की ज्योति लेकर आई हो। तुम सचमुच मेरी संजीवनी हो।

इतना कहकर प्रफुल्ल ने अपना हाथ बढ़ा दिया और सुधा ने उसके हाथ में अपना हाथ रख दिया। हृदय-मिलन का प्रमाण पाकर दोनों की आंखों में आनन्द छा गया।

इतने में शैला मिठाइयां और चाय लेकर आ गई। दोनों के सामने रखते हुए बोली, "माँ ने कहा है कि आज सुधा दीदी को मिठाइयाँ खिलाओ।"

प्रफुल्ल ने प्रसन्न भाव से कहा, "आज अपनी सुधा दीदी को जरूर मिठाइयां खिलाओ। तभी तो भाभी बनने पर वे भी तुम्हें खिलायेंगी।"

शैला ने सुधा की ओर ध्यान से देखा। सुधा का मुस्कराता चेहरा और शरमाई आँखें प्रफुल्ल के शब्दों का समर्थन कर रही थीं।

शैला आनन्द के मारे सुधा के गले से लिपट गई और गद्गद् हो बोली, "भाभी, मेरी भाभी।"

: ४ :

आसमानी रंग की पोशाक में सरला अपने कमरे से निकल कर आई और अपने घोड़े की लगाम पकड़ कर खड़ी हो गई। प्रभात के मन्द पवन में उसके काले बालों की लटें उसके चेहरे पर अटखेलियाँ कर रही थीं। उसकी आंखों की ज्योति, होठों की मन्द मुस्कान और उसकी अंगभंगी से एक अजीब तेजस्विता, सुन्दरता और उमंग फूटे पड़ती थी।

देवेन्द्र को लगा कि सरला इतनी सुन्दर और आकर्षक पहले कभी नहीं दीखी थी। सरला के उत्साह और उल्लास को अपनी आँखों में प्रतिबिम्बित करते हुए उसने कहा, "आज दूर तक जाना है। थकोगी तो नहीं?"

"थकूँगी क्यों?" कहकर सरला रकाब पर पाँव रखकर उछल कर घोड़े की पीठ पर बैठ गई। देवेन्द्र भी अपने घोड़े पर सवार हो गया। घोड़े चल पड़े। थोड़ी दूर निकल जाने के बाद देवेन्द्र ने कहा, "सरपट चाल, सरला।" घोड़े एड़ खाकर और लगाम ढीली पाकर बात की बात में हवा से बातें करने लगे। दोनों सवारों पर एक मस्ती छा गई।

कई मील निकल गये। धूप की तीक्ष्णता का अनुभव होने लगा। घोड़े पसीने से तरबतर हो रहे थे। फिर भी तेजी से चले जा रहे थे। देवेन्द्र की नजर सरला पर पड़ी। उसका चेहरा लाल होकर स्वेद-बिन्दुओं से आक्रान्त हो गया था। देवेन्द्र ने आवाज की, "दुलकी चाल"।

सरला ने घोड़े की लगाम एकाएक जोर से खींच दी। झटका खाते ही उसके घोड़े ने रुकना चाहा। लेकिन घोड़ा तेज गति में था। उसका आगे का पाँव मुड़ गया और वह धड़ाम से गिर पड़ा। सरला भी सामने जा गिरी। देवेन्द्र ने अपने घोड़े को घुमाया और सरला के पास पहुँच गया। सरला गिरते ही बेहोश हो गई थी।

देवेन्द्र ने चारों तरफ दृष्टि दौड़ाई। सब जगह सुनसान, पहाड़ और जंगल का साम्राज्य। कोई दिखाई नहीं पड़ा। उसने सरला को धीरे से उठाया और एक छायादार पेड़ के नीचे लिटाकर उसका सिर अपनी गोद में रख लिया। अपनी बगल में बंधी पानी की थैली से पानी लेकर सरला के मुँह पर छींटे डाले। सरला ने आँखें खोल दीं।

देवेन्द्र ने पूछा, "सरला, चोट तो नहीं लगी है?" और झोले में रखे फ्लास्क से चाय निकाल कर सरला को पिला दी।

सरला देवेन्द्र की गोद में असमर्थ पड़ी उसकी ओर ताक रही थी। चाय पीने के बाद होठों पर जरा मुस्कराहट लाकर बोली, "ज्यादा नहीं" और उठने लगी।

देवेन्द्र ने उसके बाल सहलाते हुए कहा, "नहीं नहीं, जरा विश्राम कर लो। एक बड़े संकट से बच गई हो। नहीं तो....

सरला ने मुस्कराते हुए कहा, "नहीं तो क्या? ज्यादा से ज्यादा मर जाती। हाँ, आपको ढोकर लेजाना पड़ता। या आप यहीं छोड़कर चले जाते?"

"तुम्हें कुछ हो जाता तो तुम्हारा देवेन्द्र कोमल-विलास कैसे लौट कर जाता?"

"अब मेरी ट्रेनिंग पूरी हो गई। गिरने का भी अनुभव जरूरी था न। अब तो अनुभवी अश्वारोही होने का लिखित प्रमाण पत्र दीजियेगा न? बिचारे घोड़े का क्या हाल है?"

"वह लंगड़ाता हुआ चर रहा है।"

"अब कोमल-विलास कैसे चलूँगी?"

"तुम्हें इसकी बड़ी चिन्ता है, सरला! मैं तुम्हारे पास नहीं हूँ?"

"क्या एक ही घोड़े पर दोनों जा सकते हैं? न, वह नहीं हो सकता।"

"क्यों नहीं ?...सरला, तुमने मुझे नहीं पहचाना है, पहचानने की कोशिश भी नहीं की है। नहीं तो ऐसा सवाल ही क्यों करती ?"

"तो क्या आप मेरे लिये अनजान हैं ?"

"अनजान नहीं रहता तो इस तरह दूर-दूर रह कर मुझे आहें क्यों भरनी पड़तीं ?"

"आप अपने को मुझसे दूर समझते हैं ?"

"दूर समझता नहीं, दूर पाता हूँ।...सोचता हूँ, वह सौभाग्य का दिन कब आयेगा जब मुझे तुम्हारे पास ही नहीं, तुम्हारे हृदय में भी स्थान मिलेगा। और दुनिया की नज़र में तुम्हें अपना कहने का मुझे अधिकार प्राप्त होगा।"

देवेन्द्र अपने को सरला के प्रेम में खो चुका था। प्रोफेसर शंकर मेनोन और माधवी अम्माँ के व्यवहार से उसे प्रोत्साहन ही मिला था। लेकिन सरला के विलक्षण विचारों ने उसे अपने को उसके सामने कभी प्रकट करने नहीं दिया। वह अपना दर्द छिपाये आशा-निराशा में डूबते-उतराते अपने दिन काट रहा था। सुधा उसे ढाढ़स दिलाती और धीरज से काम लेने की सलाह दिया करती थी।

देवेन्द्र के प्रेम और आनन्द की प्रतिमा सरला उस विजन उपत्यका में घोड़े से गिर कर निःशक्त भाव से उसकी गोद में पड़ी थी। देवेन्द्र ने जब से होश सम्भाला, इसके पहले एक नारी के सुकोमल शरीर का इतना निकट स्पर्श कभी नहीं पाया था। सरला का वह स्पर्श कितना सुखद और मोहक था! भावावेश में देवेन्द्र ने अपना सारा साहस इकट्ठा कर के सरला को अपनी व्यथा सुना दी।

देवेन्द्र के मुँह से जो शब्द निकले, सरला के लिये अप्रत्याशित थे। फिर भी वह देवेन्द्र की गोद में निश्चेष्ट पड़ी रही। मानों उस स्थिति में उसे एक विशेष आनन्द का अनुभव हो रहा था। उसके चेहरे पर, उसके

जाने बिना, मन्द मुस्कान की एक रेखा फैल गई।...थोड़ी देर के बाद वह बोली, "आजीवन कुमारी रहने का जिसने व्रत लिया है उससे आप ऐसी बातें कैसे कर सकते हैं?...क्या आप मेरा निश्चय नहीं जानते?... मेरे हृदय में आपके लिये स्थान तो है। किन्तु विवाह?...यह तो असम्भव ही है देव।"

सरला के वचन सुन कर देवेन्द्र को ऐसा लगा मानों वह एक पहाड़ की चोटी से नीचे खाई में गिर रहा हो। लेकिन सरला के प्रसन्न भाव और अन्तिम शब्द से उसकी हिम्मत बढ़ी और उसने उसकी ठुड्डी पकड़ कर कहा, "देखो सरला, कुमारी रहने वगैरह की बातें मैं नहीं समझता। कभी समझ सकूंगा, इसकी आशा भी नहीं है। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि हृष्ट-पुष्ट व्यक्तियों को जीवन के नैसर्गिक नियमों का पालन करते हुए मनुष्य के चरम विकास को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये। इसके उल्टा करना जम कर स्फटिक हो जाने की तरह है, जीवन में मृत्यु का आह्वान करना है। तुम्हें मेरा प्रेम स्वीकार न हो तो उसे भट्टी में फेंक दो। लेकिन इतना समझ लो कि उसका निश्चित् परिणाम यही होगा कि मेरा जीवन खाक हो जायेगा।...मेरी सरला, मेरी ज्योति, हम जन्म जन्मान्तर के साथी हैं। प्रेत लोक से भी मेरी आत्मा तुम्हारे इर्द-गिर्द मंडराती रहेगी।"

सरला उठ कर बैठ गई। वह अपने हृदय की धड़कन छिपाने में असमर्थ हो रही थी। उसने कहा, "मेरे देव, क्या विवाह बन्धन अपरिहार्य है? क्या स्त्री और पुरुष एक दूसरे को प्यार करते हुए विवाह पाश में बंधे बिना ही, अपने कर्तव्यों का पालन नहीं कर सकते? .. मैंने...अपने को...कभी आप से...भिन्न नहीं समझा। मेरे आनन्द के लिये इतना पर्याप्त था।...विवाह का अभाव उस आनन्द की अनुभूति में कभी बाधक प्रतीत नहीं हुआ।

देवेन्द्र—मैं जानता हूँ, मेरी सरला, कि भगवान् ने अपार्थिव तत्वों से तुम्हारा निर्माण किया है। इसी कारण मैंने तुम पर अपनी छाया भी नहीं पड़ने दी। तुम्हारे उज्ज्वल विचार और अपनी अपात्रता को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। लेकिन एक मात्र इस आशा पर कि एक दिन हिमाचल पिघलेगा और उसमें से एक शीतल धारा निकल कर मेरे जीवन को अभिषिक्त कर देगी, मैं जी रहा हूँ।....क्या मेरी आशा पूरी नहीं होगी ?

कहते-कहते देवेन्द्र ने सरला के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर अपने होठों से लगा लिये.... ।

मन्द पवन की लहरों से पेड़ के पत्ते हिल गये। डाली पर बैठी कोयल ने कूक सुना दी। सरला का क्लान्त शरीर रोमांचित हो उठा और उसकी आँखों में उल्लास छा गया।

उसने देवेन्द्र के वक्षस्थल पर अपना सिर रख दिया और स्निग्ध कण्ठ से बोली, "मेरे देव, मेरे प्राणेश्वर, आप जीते और मैं हारी। आपको अपनी जीत की खुशी होगी तो मुझे भी अपनी हार की खुशी है।"

देवेन्द्र के आनन्द का क्या कहना ! ..उसने वन भोजन की चीजें झोले से निकालीं। दोनों ने खाने में एक दूसरे की मदद की। क्या इतने आनन्द के साथ इसके पहले उन्होंने कभी खाया होगा ?

दोनों कोमल-विलास लौटने के लिये उठ खड़े हुए। देवेन्द्र ने सरला को उठा कर अपने घोड़े पर बिठा दिया। फिर स्वयं कूद कर उसके आगे बैठ गया। सरला के घोड़े की लगाम देवेन्द्र ने अपने हाथ में पकड़ ली। वह लंगड़ाता हुआ देवेन्द्र के घोड़े के साथ-साथ चला।

सरला जो सवेरे अपने घोड़े पर एक नई स्फूर्ति और उमंग के साथ निकली थी, अब देवेन्द्र के घोड़े पर बैठ कर उसकी कमर को पकड़े एक नई सुखानुभूति के साथ कोमल-विलास लौटी।

: ५ :

प्रफुल्ल सुधा को कोमल-विलास के फाटक तक पहुँचा कर और शाम को फिर आने का वचन देकर लौट गया। घर से चलते समय सुधा को शैला का गाढ़ आलिंगन ही नहीं, निरुपमादेवी का आशीर्वाद भी मिल गया था। कोमल-विलास पहुँचने पर वह बड़ी अधीरता के साथ सरला और देवेन्द्र के लौटने की प्रतीक्षा करने लगी। उसे सरला को प्रफुल्ल के बारे में सब बातें सुनानी थीं।

सरला और देवेन्द्र के लौटने में जैसे-जैसे विलम्ब होने लगा वैसे-वैसे सुधा उद्विग्न होने लगी। वह बार-बार अपनी घड़ी देखती और कहती, आज दोनों क्यों इतनी देर लगा रहे हैं? माधवी अम्माँ और प्रोफेसर भी व्यग्रता प्रकट करने लगे।

आखिर जब सरला और देवेन्द्र एक ही घोड़े पर सवार, दूसरे लंगड़ाते घोड़े को साथ लेकर पहुँचे, तब विलम्ब का रहस्य खुल गया। माधवी अम्माँ घबड़ा कर बोल उठीं, "घोड़े से गिरी, सरला?"

सरला को देवेन्द्र तब तक घोड़े पर से उतार चुका था। वह हँसती हुई बोली, "हाँ माँ, घोड़ा गिर गया और मैं भी गिरी। पर घबड़ाने की कोई बात नहीं है। कुछ हुआ नहीं।" देवेन्द्र ने संक्षेप में गिरने की घटना सबों को सुना दी।

× × ×

कमर के नीचे हौट वाटर बैग (गरम पानी की रबर की थैली) रखे सरला अपने कमरे में लेटी थी। सुधा उसके पास ही बैठी थी। सुधा चाहती थी कि सरला कुछ बातें करे। पर सरला बिलकुल मौन थी।

"सुधा ने पूछा, "अब कैसा मालूम होता है, सरला?"

"थोड़ा दर्द मालूम होता है ठीक हो जायेगा," सरला ने जवाब दिया और फिर मौन हो गई।

सरला सोच रही थी कि क्या देवेन्द्र ने उसे निस्सहायावस्था में पा कर प्रेम का अभिनय किया है ? सुधा से प्रेम करने वाला देवेन्द्र सच्चा है या आज का देवेन्द्र सच्चा है ?...क्या वह सुधा के साथ विश्वास-घात कर रहा है ? ...नहीं, यह नहीं होना चाहिये। वह अपने लिये सुधा का जीवन बरबाद नहीं होने देगी।...ऐसे ही विचारों में सरला का मन आकुल-व्याकुल हो रहा था।

सरला ने कहा, "सुधा, मैं तुम से एक बात पूछना चाहती हूँ। ठीक-ठीक जवाब दोगी ?"

"क्या पूछना है सरला कि पहले ही प्रतिज्ञा कराना चाहती हो ? क्या मैं तुमसे कुछ छिपा सकती हूँ ?"

"तुम कुछ छिपाओगी नहीं, यह तो मैं जानती हूँ। लेकिन मेरे प्रश्न का सच्चा उत्तर मिलना अत्यन्त आवश्यक है।"

"असली बात क्यों नहीं कह डालती, सरला ?"

"अच्छा बताओ, तुम देवेन्द्र से प्रेम करती हो न ?"

सुधा ने मुस्कराते हुए कहा, "देवेन्द्र से प्रेम ? भला कौन ऐसा होगा जो...।"

"बस बस, मैं तुम्हारे मुँह से इतना ही सुनना चाहती थी।"

सरला भी कोशिश कर के मुस्कराने लगी। लेकिन उसकी आँखों में आँसू छलक आये। रुंधे हुए कण्ठ से वह बोली, "सुधा, मैंने हमेशा तुम्हारे सुख की कामना की है। तुम्हें सुखी देख कर ही मैं सुखी हो सकती हूँ।"

सुधा को सरला का आन्तरिक संघर्ष समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई। सरला की उदासी और अश्रुपात का कारण उसे साफ मालूम हो गया। उसने मन में सोचा, "सरला देवेन्द्र को प्यार करती है लेकिन उसके लिये देवेन्द्र का त्याग करेगी।

देवेन्द्र के प्रति सरला के प्रेम का प्रमाण पा कर सुधा का आनन्द द्विगुणित हो गया। उसने कहा -

"सरला, मैं जानती हूँ, तुम्हारे ये आँसू क्यों गिर रहे हैं। तुम्हारे हृदय में अपनी सहेली के प्रेम और अपने प्रियतम के प्रेम, दोनों में द्वंद्व चल रहा है। लेकिन यह सर्वथा अनावश्यक है, सरला। तुम इस भ्रम में पड़ी हो कि देवेन्द्र मुझ से प्रेम करते हैं। पर सच्ची बात तो यह है कि वह तुम्हारे प्रेम में पागल हैं; मेरे और उनके बीच तो भाई बहन का सम्बन्ध है।...तुम्हें सबूत चाहिये सरला ? तो एक खुशखबरी सुनो। प्रफुल्ल घोष ने मुझे अपनी जीवन-संगिनी बनाने का प्रस्ताव किया है और मैंने स्वीकार कर लिया है। यह आज सवेरे ही हुआ। मैं तुम से कहने के लिये उतावली हो रही थी। मेरी खुशी में तुम्हारी भी खुशी है न ? अब मुझे बधाई दो।"—इतना कह कर सुधा ने सरला के कपोल को चूम लिया।

सरला का चेहरा बादलों से मुक्त पूर्णिमा के चन्द्र सा शोभायमान हो गया। वह उठ कर बैठ गई।

"सच है सुधा ? तुम प्रफुल्ल से प्रेम करती हो ? आज का दिन कैसा अपूर्व दिन है !"

सरला खाट से उठी, कपड़े बदले और सुधा को लेकर देवेन्द्र के कमरे में गई।

देवेन्द्र पड़े-पड़े दिवा-स्वप्न देख रहा था। सरला ने देवेन्द्र के चेहरे पर दृष्टि गड़ाये कहा, "आपने एक खुशखबरी नहीं सुनी है न ? सुधा की प्रफुल्ल से सगाई हो गई है।"

देवेन्द्र हर्षित हो बोला, "सच ? तब तो हार्दिक बधाइयाँ और शुभकामनायें।"

सुधा—अब आप दोनों बधाई देने का अवसर मुझे कब देंगे ?

देवेन्द्र—अपने सवाल का जवाब सरला से ही पूछो। (सरला से) सुधा को बधाई देने का अवसर नहीं दोगी ?

सरला—मैं बाधा उपस्थित करती हूँ थोड़े ही ?

सुधा ने सरला को गले लगा लिया और कहा, "सरला, अब मेरा आनन्द पूर्ण हो गया। तुमने देवेन्द्र को बहुत तड़पाया है। तुम्हें प्रायश्चित करना होगा। आज के दिन की हम दोनों कितनी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे ?"

सरला ने मुस्कराते हुए कहा, "हाँ, प्रायश्चित्त तो करना ही होगा। तुम लोगों के कारण मेरा व्रत जो भंग हुआ है। इसके लिये प्रायश्चित्त नहीं करूँगी ?"

सुधा—ठीक है। विवाह का भोज और व्रत-भंग के प्रायश्चित्त का भोज दोनों एक साथ ही हो जायेगा।

× × ×

देवेन्द्र ने माधवी अम्माँ और प्रोफेसर को जब सुनाया कि सरला ने अब एक गहरे अर्थ में उन्हें माता-पिता कहने का उसे अधिकार दे दिया है तब उनके आनन्द की सीमा न रही। माधवी अम्माँ की आँखों में आनन्दाश्रु उमड़ पड़े। उन्होंने कहा,

"मैं तो यह दिन देखने की आशा ही छोड़ बैठी थी। भगवान् तुम दोनों को आयुष्मान् बनावें।"

प्रोफेसर ने कहा, "देवेन्द्र, हम दोनों तुम्हें पुत्र जैसा ही मानते हैं। हमारी यह कामना है कि तुम दोनों सुखी होओ।

देवेन्द्र ने सुधा और प्रफुल्ल की सगाई का सम्वाद भी दोनों को सुनाया। माधवी अम्माँ ने कहा, "दोनों सहेलियों का भाग्य एक साथ चमका है।"

"भगवान् दोनों का मंगल करें," प्रोफेसर ने कहा।

देवेन्द्र के चले जाने पर माधवी अम्माँ ने शंकर मेनोन से कहा, "प्रफुल्ल घोष बंगाली है। क्या सुधा की माँ को यह विवाह पसन्द पड़ेगा ?"

शंकर मेनोन—आज राष्ट्रीय भावना सब जातियों और प्रान्तों को मिलाने का काम कर रही है। सब तरह के कृत्रिम भेद-भावों की दीवारें ढहती जा रही हैं।

माधवी अम्माँ—लेकिन समाज ने भेद-भाव कहाँ छोड़ा है ?

शंकर मेनोन—व्यक्ति ही समाज बनाते हैं। बहुत से व्यक्ति जब समय की गति और आवश्यकता को समझ कर नये रास्ते पर चलने लगते हैं तब समाज भी धीरे-धीरे उसे मानने लगता है। जात-पाँत और धर्म के नाम पर मनुष्य-मनुष्य में भेद करना, धर्म की हत्या करना है। सच्चा धर्म मानवमात्र तो समान और एक ईश्वर की सन्तान मानने में ही है। प्रेम और दया ही सच्चे धर्म के तत्व हैं। विवाह के लिये भी मुख्य बात स्त्री-पुरुष के हृदय का प्रेम ही है।

छठवाँ भाग

: १ :

मेनोन दम्पति ऊटी से अपना स्वास्थ्य सुधार कर ही नहीं लौटे वरन् अपनी एक मात्र सन्तान के विवाह के निश्चय से आनन्दित हो कर भी लौटे। अब उन्हें कुछ सोचने, कुछ योजनायें बनाने और आपस में चर्चा करने का एक नया विषय मिल गया जो उनके लिये बहुत सुखदायक था।

एक दिन पार्वती अम्माँ सरला और देवेन्द्र के विवाह के सम्बन्ध में बातें करने शान्तिकुंज गईं। माधवी अम्माँ और शंकर मेनोन ने बड़े हर्ष से उनका स्वागत किया। माधवी अम्माँ ने सब से पहले कुमुद का समाचार पूछा। पार्वती अम्माँ ने कहा, "इधर कई दिनों से उसका पत्र नहीं आया है। बच्चा बराबर अस्वस्थ ही रहता है। शायद उसी से परेशान रहती होगी।

माध्वी अम्माँ — सरला और देवेन्द्र के विवाह के अवसर पर कुमुद और बालकृष्ण को अवश्य आना चाहिये।

पार्वती अम्माँ—मैंने लिख तो दिया है। बच्चा अच्छा रहा तो दोनों ज़रूर आयेंगे।

शंकर मेनोन—बच्चे के लिये काश्मीर की जल-वायु अनुकूल नहीं मालूम होती।

पा० अम्माँ—मालूम नहीं क्या कारण है। माँ का दूध नहीं मिलने से वह शुरू से ही कमजोर रहा है।

इतने में नौकर ने नाश्ता और कॉफी लाकर रख दी। नाश्ते के बीच पार्वती अम्माँ ने विवाह का दिन निश्चित् करने के बारे में बातें उठाईं।

मा० अम्माँ ने कहा, "अगस्त २५ को अच्छा मुहूर्त है, ज्योतिषी ने कहा है।"

पा० अम्माँ—ठीक है, तैयारी के लिये थोड़ा समय भी मिल जायेगा।

मा० अम्माँ—चेची (दीदी) हमें इसकी बहुत खुशी है कि देवेन्द्र की माता के रूप में आपसे हमारा एक नया सम्बन्ध जुड़ने जा रहा है।

पा० अम्मा—ठीक है माधवी। मैं गोपालन और देवेन्द्र में कोई भेद नहीं मानती। और अब तो गोपालन का स्थान देवेन्द्र का ही है। मुझे तो ऐसा लगता है कि मेरे अपने पुत्र का ही विवाह होने जा रहा है।

मा० अम्माँ—मैं अपने आनन्द की बात क्या कहूँ ? मैं तो आनन्द के इस अवसर को देखने की आशा ही छोड़ चुकी थी। लेकिन भगवान् ने मेरी प्रार्थना सुन ली।

पा० अम्माँ—सचमुच विवाह का अवसर एक बड़े आनन्द का अवसर है। माता-पिता का तो यह एक कर्तव्य ही माना जाता है कि वे अपने जीवन काल में ही अपनी सन्तान का विवाह करा दें।

शं० मेनोन—विवाह मानव जीवन को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है। सृष्टि के प्रारम्भ से नर-नारी का संयोग एक अतिशय आनन्द और उल्लास का अवसर रहा है। विवाह उस सृजनात्मक नैसर्गिक प्रेरणा की परिष्कृत परिपूर्ति है जिसका सुखाकर्षण सृष्टि की अविच्छिन्नता और निरन्तरता के लिये अपरिहार्य ही नहीं है वरन् जो स्थूल में सूक्ष्म, नश्वर में अनश्वर और उत्सर्ग में उद्धार की झलक भी दिखाता है। इतना ही नहीं, विवाह मानव के जीवनोत्कर्ष और पुरुषार्थ का प्रेरक; धर्म और काम, एवं इहलोक और परलोक का साधक भी है। इसीलिये विवाह

का अवसर सब के लिये एक विशेष हर्ष और आनन्दोत्सव का कारण होता है।

माधवी अम्माँ ने कहा, "घर के उत्तरी भाग को बढ़ा कर ऐसा बनवा दिया जाय जिससे सरला और देवेन्द्र को अपने नये जीवन में प्रवेश कर पूरी आजादी के साथ रहने की सुविधायें रहें। एक षटकोणाकार बैठक खाना हो जिसमें चारों तरफ शीशेदार खिड़कियाँ रहें। दो कमरे हों, एक दफ्तर के काम के लिये और एक शयन के लिये। दोनों कमरों के साथ दो और छोटे कमरे हों। शयन-कक्ष के साथ स्नानागार रहे। दोनों कमरों के बीच की दहलीज से हो कर इस मकान में आने के लिये दर्वाजा खोल दिया जाय।

पार्वती अम्माँ और शंकर मेनोन को माधवी अम्माँ का 'प्लैन' बहुत पसन्द आया।

काम शुरू हो गया। सारे अहाते की सफाई होने लगी। मकान पर चूने की पुताई हुई। सब दृष्टि से शान्तिकुंज को निवाहोत्सव के योग्य आकर्षक बनाया जाने लगा।

सरला के माता-पिता अब उस सुदिन के लिये अधीर होने लगे जब कि सरला गृहस्थ जीवन में प्रवेश करेगी।

उधर सरला और देवेन्द्र अपने अवकाश का अधिक-से-अधिक समय साथ-साथ बिताने लगे। इतने वर्षों का नज़दीकी परिचय होने पर भी आज वे जिस घनिष्ठता और आत्मीयता का सुखानुभव कर रहे थे, वह एक बिल्कुल नई चीज थी। आज एक दूसरे के संग में बैठने और बातें करने में एक नये आनन्द का आस्वादन हो रहा था।

दोनों को एक दूसरे से कहने के लिये अनेक बातें थीं। अब कोई बाधा नहीं, संकोच नहीं, छिपाव नहीं। अब मन, हृदय और आत्मा भौतिक सीमाओं को अतिक्रमण कर के एक रूप हो रहे थे। लेकिन

जिह्वा से भी अधिक वे अपनी आँखों द्वारा अपने भावों का आदान-प्रदान कर रहे थे।

× × ×

विवाहोत्सव के सिर्फ दो सप्ताह बाकी थे। शान्तिकुंज में सब तैयारियाँ करीब-करीब पूरी हो गई थीं। शंकर मेनोन और माधवी अम्माँ एक तरह की निश्चिन्तता का अनुभव करने लगे।

सरला और देवेन्द्र बैठे बातें कर रहे थे। अखबार वाला उस दिन साइकिल पर और दिनों की अपेक्षा अधिक तेजी के साथ आया और सीढ़ियों पर "हिन्दू" अखबार गिरा कर चला गया। पहले ही पृष्ठ पर बड़े-बड़े टाइपों में छपा था—

"बम्बई में महात्मा गान्धी और वर्किङ्ग कमेटी के सदस्य गिरफ्तार"

सरला ने धड़कते हुए दिल से जोर से आगे पढ़ा "अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में "भारत छोड़ो" और "करेंगे या मरेंगे" का प्रस्ताव पास। महात्माजी की रात में गिरफ्तारी। दूसरे नेता भी गिरफ्तार।

सारी खबर सुन चुकने के बाद देवेन्द्र के मुँह से निकला "बड़ा बुरा हुआ। इसका बड़ा बुरा नतीजा होगा।"

दोनों प्रेमी जो एक क्षण पहले इस दुनिया की चिन्ताओं से दूर अपनी एक नई दुनिया में पहुँच कर एक अभूतपूर्व आनन्द का अनुभव कर रहे थे, अखबार में देश के नेताओं की गिरफ्तारी की खबर पढ़ कर मानों स्वप्न से जाग उठे। दोनों काफी देर तक बातें करते रहे और आखिर जब अलग हुए तब अपने दिलों में एक दर्द लेकर अलग हुए। वह प्रेम का मीठा दर्द नहीं था। वह था नेताओं की गिरफ्तारी का दर्द।

: २ :

दूसरे दिन के अखबार देश भर में होने वाली गिरफ्तारी की खबरों से भरे थे। हर प्रान्त और हर जिले में एक साथ गिरफ्तारियाँ हुईं और छोटे बड़े करीब सब राजनैतिक नेता पकड़ कर जेल में डाल दिये गये।

गिरफ्तारी की खबरों के साथ तोड़-फोड़ की भी खबरें निकलीं। जनता द्वारा रेलवे लाइन तोड़ कर रेल और माल गाड़ी के डिब्बे गिराये जाने, रेलवे पुलों को बारूद से उड़ाये जाने, टेलीग्राफ के तार काटे जाने, सरकारी दफ्तर और गोदाम जलाये जाने आदि-आदि की खबरों से चारों तरफ सनसनी फैल गई।

इसके साथ-साथ कुछ लोगों के पास साइक्लोस्टाइल किये हुए या छपे हुए पर्चे भी पहुँचने लगे जिसमें निर्देश दिये गये थे कि जनता को क्या-क्या करना चाहिये। ऐसा लगा कि आजादी की वह अंतिम लड़ाई थी। सब जगह देश के नौजवानो का दिल उस लड़ाई में कूद पड़ने के लिये मचल उठा।

शान्तिकुंज जो दो-तीन साल पहले नगर के युवक संघ का अड्डा बन गया था फिर एक नई जागृति और हल-चल का केन्द्र बन गया। नगर के उत्साही युवक सरला के यहाँ इकट्ठे हो कर विचार विनिमय करने लगे। सरला उस नये आन्दोलन की अभिनेत्री समझी जाने लगी।

सरला और प्रोफेसर मेनोन के पास सरकार की तरफ से चेतावनी आई कि वे अपने यहाँ विद्यार्थियों को एकत्रित न होने दें और सब तरह के राजनैतिक कार्यों से अपने को अलग रखे। सरला ने अपना इस्तीफा लिख कर शिक्षा विभाग को भेज दिया।

सरला उस क्रान्ति में खिंचती चली गई। उसका सम्पर्क क्रान्ति के कुछ सूत्रधारों के साथ स्थापित हो गया। उसने कांग्रेस-विद्यार्थी-संघ का संगठन करना शुरू कर दिया। स्कूल, कालेज में पिकेटिंग भी शुरू हो गई। पुलिस की उस पर कड़ी नजर रहने लगी।

माधवी अम्माँ और शंकर मेनोन जो सरला के विवाह के दिन गिन रहे थे, इन अप्रत्याशित घटनाओं से बहुत चिन्तित हो उठे। सरला अपनी विवाह-शादी की बात भुला कर देवेन्द्र के साथ अपना सारा समय अपने नये काम में लगाने लगी। माता-पिता ने बड़े पैमाने पर विवाहोत्सव करने का विचार छोड़ दिया। तय किया कि मूहूर्त्त के दिन सिर्फ विवाह की रस्म पूरी की जायगी।

× × ×

कई विद्यार्थी गिरफ्तार हो गये। नगर के तमाम विद्यार्थियों में एक नया जोश पैदा हो गया। पुलिस की इस कार्रवाई के विरुद्ध एक बड़ा प्रदर्शन करने का निश्चय हुआ।

दस बजे का समय था। विद्यार्थीगण अपने-अपने घरों और छात्रालयों से निकले मानों स्कूल-कालेज जा रहे हों। लेकिन कुछ को छोड़ कर सैकड़ों की संख्या में वे नगर के बड़े मैदान में इकट्ठे हुये।

पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार ठीक समय पर सरला उनके बीच पहुँची। उस दिन उसे विद्यार्थियों के जुलूस का नेतृत्व करना था। 'वन्देमातरम्' 'महात्मा गान्धी की जय', 'इनकिलाब जिन्दाबाद' आदि गगनभेदी नारों के साथ जलूस निकला।

थोड़ी ही दूर जाने के बाद दल-बल के साथ पुलिस इन्सपेक्टर ने आ कर जलूस को आगे बढ़ने से रोक दिया। सरला हाथ में राष्ट्रीय झण्डा लिये सब से आगे थी। इन्सपेक्टर ने सरला से जलूस भंग कर देने को कहा। उसने जुलूस भंग करने से इनकार कर दिया। इन्सपेक्टर ने उसे जुलूस का नेतृत्व त्याग देने को कहा। सरला ने उत्तर दिया, "असम्भव है।" तब इन्सपेक्टर ने कहा, "अपने को गिरफ्तार समझें।" सरला ने कहा, "मंजूर है।"

सरकार से लड़ने का यह गान्धी जी का सिखाया अहिंसात्मक तरीका था।

उसी दिन रात को दस बजे सरला और देवेन्द्र के विवाह का मुहूर्त्त था। प्रोफेसर शङ्कर मेनोन और देवेन्द्र ने पुलिस से पता लगाने का बहुत प्रयत्न किया कि सरला कहाँ है। पर उसका पता नहीं लगा।

सरला की गिरफ्तारी से माधवी अम्माँ दुख सागर में डूब गईं। खाना-पीना छोड़ दिया। शंकर मेनोन ने उन्हें समझाने की कोशिश करते हुए कहा, "सरला देश के लिये जेल गई है। यह दुख करने का अवसर नहीं है। देश की आजादी बलिदान खोजती है। बलिदान की भावना और साहस जिस राष्ट्र में नहीं है वह आजाद नहीं हो सकता और आजाद हो भी जाय तो अपनी आजादी की रक्षा नहीं कर सकता। देश की सेवा का अवसर बड़े भाग्य से ही मिलता है। उसका स्वागत करना चाहिये। माता-पिता को अपनी सन्तान को देश-सेवा के लिये अर्पित करने में हर्ष और अभिमान का अनुभव करना चाहिये।"

पत्नी को धीरज धराने के लिये प्रोफेसर उपर्युक्त बातें कह तो गये पर उनका ही हृदय सरला के लिये विह्वल हो रहा था।

लेकिन सब से दयनीय स्थिति तो देवेन्द्र की थी। सरला के काम में उसका पूर्ण सहयोग था। उसे एक विशेष उत्साह और गर्व का अनुभव हो रहा था कि उसकी सरला, उसकी भावी पत्नी आजादी की लड़ाई में लगी है। उसने उसका साथ देने का निश्चय कर लिया था।

पर सरला के एकाएक गिरफ्तार हो जाने से वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। अब तक वह सरला की सिर्फ सहायता कर रहा था। लेकिन अब उसके लिये अपना आगे का कार्य-क्रम निश्चित करना जरूरी हो गया।

देवेन्द्र में शक्ति थी, बुद्धि थी और उसे देश की स्थिति का ज्ञान था। वह अपने जीवन में गरीबी का दुख भोग चुका था। उसे सरला

के प्रेम का बल भी प्राप्त था। उसने निर्णय किया कि वह सरला का अनुसरण करेगा। वह भी आजादी की लड़ाई का एक सिपाही बनेगा।

उसने अपना कार्य-क्रम बना लिया। विद्यार्थियों के संगठन को मजबूत बनाने के साथ-साथ गाँव के किसान और मजदूरों के संगठन का काम भी शुरू कर दिया। उसके काम करने का तरीका अनोखा था। वह समानान्तर सरकार बनाना चाहता था। उसने "सेवक" नाम से पर्चे तैयार कर के लाखों की संख्या में गाँव-गाँव में बँटवाना शुरू किया। उसके पहले पर्चे में जनता से अपील थी कि देश की आजादी के लिये मर मिटने वाले सिपाही चाहिये, "जो गरीबों से प्रेम करेंगे और अहिंसा का पालन करेंगे।"

: ३ :

कुमुद अपने बच्चे की सेवा शुश्रूषा में चौबीसों घण्टे लगी रहती। डाक्टर के बीच-बीच में आने पर दो-एक जरूरी बातें करने के सिवा वह प्राय: मौन रहती।

अब वह पहले की कुमुद नहीं रही। काश्मीर लौटने के समय उसे जिस नई गरिमा का अनुभव हुआ था वह अब अतीत की बात हो गई थी। अब तो वह एक निराशा और पीड़ा का ही जीवन बिता रही थी।

लेकिन इसका कारण बच्चे की बीमारी ही नहीं थी। इसका कारण, इससे भी गहरा, बालकृष्ण का बदला हुआ रवैया था।

कुमुद और बालकृष्ण एक ही घर में, एक ही छत के नीचे रहते थे। उनके प्रेम का प्रतीक उसका बच्चा अभी कायम ही था। फिर भी पति पत्नी में एक दूरत्व का भाव पैदा हो गया था। वे अब न आपस में बातें करते न साथ बैठ कर खाना खाते। एक दूसरे को अब रोज देखते तक नहीं थे।

× × ×

कुमुद जब बच्चे को लेकर काश्मीर लौटी तब बालकृष्ण ने पहले बहुत प्रसन्नता प्रकट की और उनमें बड़ी दिलचस्पी दिखाई। लेकिन ऐसा अधिक दिन नहीं चला।

बालकृष्ण ब्रिटिश रेसिडेन्सी में काम करता था और रेसिडेन्सी के क्लब का मेम्बर था। क्लब का खान-पान, नाच-रंग यूरोपियन ढंग पर होता था। शुरू में उसने कुमुद को भी वहाँ ले जाना चाहा था पर कुमुद ने जाने से इनकार कर दिया।

इधर बालकृष्ण क्लब से लौटने में देर करने लगा तो कुमुद ने उलाहना दिया। उस ने जल्दी लौटने का वायदा किया पर वायदे का पालन नहीं किया। उल्टे कुमुद को उसकी प्रतीक्षा में बड़ी रात तक बैठे रहने की बात को लेकर झुंझलाना शुरू किया। इसका नतीजा हुआ कि दोनों ने इस सम्बन्ध में कुछ कहना छोड़ दिया।

बालकृष्ण ऐसा व्यवहार करने लगा मानो घर में पत्नी और बच्चा नाम के कोई हैं ही नहीं। वह रात को देर से आता, देर से दूसरे दिन उठता और खाना खाकर दफ्तर चला जाता। बस, यही उसका कार्यक्रम हो गया। कुमुद ने उसका ध्यान अपनी और बच्चे की ओर खींचने के कई उपाय किये पर कोई फल नहीं हुआ।

कुमुद घबड़ाई कि बालकृष्ण को क्या हो गया। बाद को उसे सन्देह होने लगा कि रात को वह क्लब से शराब पीकर लौटता है। एक दिन वह पूछ बैठी। बालकृष्ण कुछ गोल मटोल जवाब देकर बाहर चला गया। लेकिन जब एक दिन बालकृष्ण की चीजें व्यस्थित करते समय कुमुद को उसकी अलमारी में शराब की बोतलें मिलीं तब उसका सन्देह पक्का हो गया।

बालकृष्ण से उसके बारे में पूछने पर उसने कुमुद को खूब डांटा और आगे उसकी निज की बातों में नहीं पड़ने को कहा। उस दिन कुमुद बहुत रोई और रात को बालकृष्ण के लौटने की खबर जब नौकर

ने उसको दी तब वह अस्वस्थता का कारण बताकर कमरे से नहीं निकली। उस दिन से दोनों का साथ-साथ बैठ कर खाना भी बन्द हो गया।

इस तरह दोनों एक दूसरे से और भी दूर हो गये।

× × ×

कुमुद का स्त्री-हृदय पति के प्रेम और सहारे के लिये व्यग्र हो उठा। वह चाहने लगी कि बालकृष्ण उसके कमरे में आता, बच्चे को देखता और कुछ पूछता। उसे लगा, "अगर पति क्लब से देर करके लौटता है और शराब पीता है तो क्या हुआ? अनेक लोग मन बहलाव के लिये ऐसा करते हैं। ...... क्या बालकृष्ण ऐसा सोच कर नाराज रहता है कि मैं उससे घृणा करती हूँ? ... मैं उसके पास जाऊँगी, अपने आँसुओं से उसके पाँव धो डालूँगी। उससे क्षमा मांगूंगी। तब उसका दिल पसीज जायेगा। वह मुझे उठा लेगा, हृदय से लगा लेगा, मेरे आँसू पोंछ देगा। मैं कहूंगी, मैं तुमको अप्रसन्न करने वाली कोई बात नहीं करूंगी। वह मुस्करा देगा और फिर हमारे दिन पहले जैसे हो जायेंगे।"

लेकिन मन में फिर विचार उठा, "आखिर मैंने क्या अपराध किया है जिसके लिये मुझे इस तरह दण्ड मिल रहा है? ... मैंने रात में जल्दी घर लौटने को कहा था, शराब पीने और शराब की बोतलों के बारे में पूछा था। क्या यही मेरा इतना बड़ा भारी अपराध हो गया?... ... और इस नन्हें बच्चे ने क्या अपराध किया है? ...... क्या यह उसका पुत्र नहीं है? ... वह इसका पिता नहीं है? ... क्या कोई पिता इतनी निष्ठुरता दिखा सकता है? ... ना, ऐसे व्यक्ति के पास मैं क्षमा मांगने नहीं जा सकती। ... अब मुझे अपना दुख चुपचाप अकेले ही सहना है।"

× × ×

एक दिन डाकिये ने जब पत्र लाकर दिये, कुमुद की नजर एक रंगीन लिफाफे पर पड़ी जो बालकृष्ण के नाम था। उसकी लिखावट देखकर कुमुद को कौतूहल हुआ और उसने उसे खोलकर पढ़ा। पत्र को पढ़ते ही उसका चेहरा सफेद हो गया। वह एक ऐंग्लो इण्डियन लड़की का प्रेम-पत्र था। उसने लिखा था, "मुझे यकायक लाहौर आ जाना पड़ा। रवाना होने के पहले तुमसे मुलाकात नहीं कर सकी। इसका मुझे बहुत अफसोस है। बुरा नहीं मानना। एक हफ्ते में वापिस लौटूंगी।" वगैरह-वगैरह।

कुमुद की आँखें डबडबा गईं। वह उस पत्र को हाथ में पकड़े कुछ देर स्तम्भित बैठी रह गई। बालकृष्ण के परिवर्तन का रहस्य अब उसकी समझ में पूरा-पूरा आ गया। उसे लगा मानो वह ज्वालाओं के बीच पड़ी है।

स्त्री अपने पति के सब अत्याचार और निष्ठुरता तब तक सहन करती है जब तक उसके दिल में पति के प्रेम की थोड़ी आशा बनी रहती है। वह प्रेम उसके बल, प्रकाश और आनन्द का स्रोत है, जिसे पाकर वह कुटिया में भी एक रानी का गौरव अनुभव करती है और जिससे वंचित हो जाने पर राजमहल भी उसके लिये वीरान हो जाता है; लेकिन उस आशा के टूट जाने के बाद वह अपना संतुलन खो बैठती है।

कुमुद और बालकृष्ण के जीवन की दो धारायें मिलकर एक हो गई थीं। पिछले दिनों के अप्रिय अनुभवों के कारण उनके बीच एक रेखा पैदा हो गई थी। अब इस पत्र ने उस रेखा पर एक दीवार खड़ी कर देने का काम किया।

× × ×

बच्चे की हालत खराब होती गई और एक दिन वह अंतिम सांस लेकर माँ की गोद सूनी करके चल बसा और उसके साथ ही कुमुद और बालकृष्ण के सम्बन्ध का आखिरी तार भी टूट गया।

कुमुद का मन इस प्रहार के लिये धीरे-धीरे तैयार हो गया था। लेकिन उसने यह नहीं सोचा था कि उसका पति अपने एकमात्र बच्चे की अकाल मृत्यु पर भी एकदम तटस्थ और उदासीन बने रहने की हृदय हीनता दिखायेगा।

कुमुद का हृदय चीत्कार कर उठा। अब उसके लिये बालकृष्ण के घर में एक क्षण भी रहना असम्भव हो गया। उसने अपनी माँ के नाम तार भेज दिया कि बच्चे की मृत्यु हो गई और वह घर लौट रही है।

दूसरे ही दिन कुमुद काश्मीर से रवाना हो गई।

: ४ :

सारे देश का वातावरण क्षुब्ध हो गया है। सब जगह सरकार के दमन चक्र की रोमांचकारी खबरें सुनाई पड़ती हैं। कोच्चिन में अपेक्षाकृत शान्ति मालूम होती है। लेकिन भीतर ही भीतर आग सुलग रही है। एक दिन देखने में आया कि झुण्ड के झुण्ड लोग बाहर के गाँवों से राजधानी में आ धमके हैं। बहुतेरे कई मील दूर के गाँवों से आये हैं। नगर के लोगों को उस बढ़ती भीड़ को देखकर अचम्भा हो रहा है। पुलिस भी हैरान है। उसे इसके बारे में कोई खबर नहीं थी।

आगन्तुक नगर के उस बड़े मैदान में इकट्ठे हो रहे हैं जिसके पास ही समुद्र की गरजती लहरें पत्थरों की ऊँची दीवार से टकरा-टकराकर मानों यह सन्देश दे रही हैं कि जूझना ही जीवन है।

भीड़ की विशेषता यह है कि शोरगुल का नाम नहीं। एक-एक दस्ता एक-एक नायक के अनुशासन में है। किसी तरह के नारे

की भी आवाज नहीं सुनाई पड़ती। यह भीड़ मानों श्रद्धावान तीर्थ-यात्रियों की भीड़ है। सभी के चेहरे पर शान्ति है, दिल में दृढ़ता और बलिदान की भावना है और कदम में आगे बढ़ने का जोश है। एक विचित्र प्रकार का प्रदर्शन है। वैसा किसी ने कभी पहले नहीं देखा था।

नगर में दफा १४४ पहले ही से जारी है। सड़कों और मैदानों में भीड़ और सभा करने की कानूनन मनाही कर दी गई है। फिर भी समुद्र की तरह उमड़ती इस शान्त भीड़ को देखकर पुलिस हक्काबक्का हो गई है।

भीड़ का कोई नेता नहीं मालूम होता, पर इसमें सन्देह नहीं कि उसके पीछे कोई जबर्दस्त अनुशासन और व्यवस्था है। पुलिस की नजरों के सामने मैजिस्ट्रेट की नगर में जारी की हुई दफा १४४ टूट रही थी। पुलिस अपनी शान पर धक्का लगते देखकर बौखला उठी। हाँ, पुलिस की शान! लाल पगड़ी की शान! (जिसके बल पर ब्रिटिश सल्तनत हिन्दुस्तान में कायम थी)। पुलिस विभाग के लिये यह असह्य था।

पुलिस इन्स्पेक्टर, सुपरिण्टेण्डेण्ट, कमिश्नर और मैजिस्ट्रेट, सबने मिलकर मशविरा किया। निश्चय हुआ कि उस जनसमूह को एक सबक सिखाना जरूरी है। पुलिस ने अपने मोर्चे ठीक कर लिये और अस्त्र-शस्त्र से तैयार हो अपने मौके की प्रतीक्षा करने लगी।

मैदान में हजारों की संख्या में इकट्ठे किसान मजदूर शान्त भाव से बैठे थे। उनका आज का प्रदर्शन सरकार की जारी की हुई दफा १४४ को भंग करने तथा देश को आज़ाद कराने का अपना दृढ़ निश्चय प्रकट करने के लिए संगठित किया गया था।

वे सब सच्चे खिलाड़ियों की तरह हृदय में एक उल्लास का भाव लेकर सरकार से निःशस्त्र टक्कर लेने के लिये सन्नद्ध बैठे थे।

भीड़ की एक तरफ से एक युवक उठा। वह एक ऊँची जगह पर, जहाँ से सबों को दिखाई दे सके, जाकर खड़ा हो गया। कुछ लोगों ने उठकर उसके गले में खादी की मालायें पहनायीं। बरबस सभी के मुँह से एक स्वर में निकला—"महात्मा गान्धी की जय"। उस युवक ने हाथ जोड़कर सब को नमस्कार किया और शान्त रहने का संकेत किया। चारों तरफ निस्तब्धता छा गई। वह युवक देवेन्द्र था।

वह कुछ बोलनेवाला ही था कि पुलिस इन्स्पेक्टर अपने सिपाहियों के साथ वहाँ आ धमका और उस युवक को सम्बोधित कर बोला, "यह सभा गैरकानूनी है। आप लोगों को चले जाने को कह दीजिये।"

"मैं यह नहीं कर सकता।"

"इसका नतीजा बुरा होगा और आप इसके लिये जिम्मेवार होंगे।"

"मैं उस सरकार को और उस कानून को नहीं मानता जिसके आप प्रतिनिधि हैं। यह सभा होगी और मैं इसमें भाषण दूँगा।"

पुलिस इन्सपेक्टर चला गया।

उस युवक ने अपना भाषण शुरु किया, "देश बन्धुओ, देश को आजाद कराने की प्रतिज्ञा लेने के लिये आज हम सब यहाँ एकत्रित हुए हैं। महात्मा जी ने अंग्रेजों से कहा है कि वे हिन्दुस्तान छोड़ दें। महात्मा जी और देश के सब नेताओं को गिरफ्तार करके सरकार ने जेल में डाल दिया है। इस नगर की वीर पुत्री सरला कुमारी भी आज जेल में है। आज हमें निश्चय करना है कि हमारा क्या कर्तव्य है! सरकार को हमारा क्या जवाब होगा? गान्धी जी ने कहा है "करेंगे या मरेंगे ...।"

इतने में गोली चलने की आवाज हुई।

वक्ता को एक गोली लगी। वह आगे नहीं बोल सका। गोली खाकर गिर पड़ा ; और भी कई गिरते नजर आये। लेकिन लोग शान्त बने रहे।

पुलिस की गोली उनके दृढ़ निश्चय को नहीं भेद सकी। वे सब दृढ़ प्रतिज्ञ अहिंसा व्रती थे।

× × ×

सरला गिरफ्तारी के बाद अपने प्रान्त के बाहर एक बड़े जेल में 'ए' क्लास कैदी के तौर पर रखी गई थी। जेल में उसका समय महिला कैदियों को कुछ पढ़ाने-लिखाने, नियमित रूप से सूत कातने और स्वयं कुछ पढ़ने में व्यतीत होता था। जेल में आने के बाद उसने राष्ट्रभाषा का विशेष उत्साह से अध्ययन भी शुरु कर दिया था। इस तरह उसके जेल-जीवन के दिन कट रहे थे।

बाहरी दुनिया की जानकारी प्राप्त करने का उसका एकमात्र साधन एक अंग्रेजी अखबार था जो सरकार का जबर्दस्त हिमायती था। माता-पिता से वह हफ्ते में एक बार पत्र-व्यवहार कर सकती थी। पर सब पत्र "सेन्सर" होकर आते-जाते थे।

एक दिन अखबार पढ़ते समय सरला की नजर एक कोने में छोटे टाइपों में छपे "कोचिन की राजधानी में गोली चली।" इस वाक्य पर पड़ी, और उसे पढ़ते ही उसका कलेजा कांप गया। वह सरसरी नजर से सारी खबर पढ़ गई। उसकी आँखों से अविरल अश्रुधारा बह निकली। अखबार में छपा था, "दफा १४४ का उल्लंघन करने के लिये हजारों किसान मजदूर इकट्ठे हुए थे। पुलिस के आदेशानुसार भीड़ तितर-बितर नहीं हुई। कानून और व्यवस्था की रक्षा के लिये पुलिस ने गोली चलाई। पाँच व्यक्ति घायल हुए। एक की हालत चिन्ताजनक है। वह अस्पताल में है। वह नगर का देवेन्द्र नामक एक

नौजवान वकील है। कहा जाता है कि उसी ने सभा का संगठन किया था।"

इस खबर को पढ़कर सरला को लगा मानों सिर पर वज्रपात हो गया। एक भयंकर आशंका से उसके प्राण सूख गये। वह पागलों की तरह विलाप करने लगी, "मेरे देव, मेरे हृदयेश्वर, तुम भी आग में कूद पड़े। ...तुम अलग रह भी कैसे सकते थे ? ...अब मैं क्या करूँ ? कैसे दौड़ कर तुम्हारे चरणों में लोट-पोट हो जाऊं ? ...गंगाजल के समान पवित्र तुम्हारे प्रेम ने मेरे हृदय में प्रकाश भर दिया था। ...काश, अपना हृदय चीर कर तुम्हें दिखा सकती। ...मैं अभागी तुम्हारी सेवा करने के अवसर से भी वंचित रही। ...भगवान्! मेरे देवेन्द्र को बचाना !" कहते-कहते वह फूट-फूट कर रोने लगी।

सरला को जेल में डाले जाने का जरा भी दुख नहीं था। उल्टे वह एक उल्लास और अभिमान का अनुभव कर रही थी कि वह देश की आजादी की एक सिपाही है। लेकिन उसने यह नहीं सोचा था कि देवेन्द्र भी इस क्रान्ति में कूद पड़ेगा और उसका यह नतीजा होगा।

जेल-जीवन के अवैयक्तिक नियमों में बन्धी सरला निरुपया और निस्सहाय हो छटपटाने लगी। उसका दिल हाहाकार करने लगा और बार-बार यह सवाल उसके मन में उठने लगा कि "क्या मैं देवेन्द्र को फिर नहीं देख सकूंगी ?"

: ५ :

राजधानी के बड़े अस्पताल के एक भाग में कुछ स्त्री-पुरुष दबी जबान से बातें कर रहे हैं। कमरे में एक खाट पर देवेन्द्र बेहोश पड़ा है। माधवी अम्मा, पार्वती अम्मा और शंकर मेनोन एक तरफ खड़े हैं। उनके चेहरों से उनके दारुण दुख का प्रमाण मिल रहा है। दोनों महिलाओं की आंखें रोते-रोते लाल हो गई हैं।

खाट के पास एक और महिला, जिसके म्लान सुकोमल चेहरे से एक असाधारण गम्भीरता और दृढ़ता का भाव प्रकट हो रहा है, सावधानी से घायल की परिचर्या में लगी है। वह है कुमुद। देवेन्द्र के गोली लगने के दिन ही वह घर पहुँची थी और देवेन्द्र की सेवा शुश्रूषा में लग गई थी।

सिस्टर जोसेफीन जो अस्पताल में अब मेट्रन का काम करती है, बीच-बीच में आकर घायल को देखती और कुमुद को जरूरी हिदायत देकर चली जाती है।

डाक्टरों के अनुसार देवेन्द्र के बचने की आशा नहीं है। फिर भी जो कुछ सम्भव है, वे सब उपाय कर रहे हैं। कुमुद की नजर देवेन्द्र के चेहरे से एक क्षण के लिये भी नहीं हटती। वह मना रही है, "काश, ज़रा आँखें खोलते और कुछ कहते।" कुछ समय के बाद देवेन्द्र का होंठ जरा हिला और उसके मुंह से अत्यन्त क्षीण स्वर में निकला, "सरला!" और उसके साथ ही अनेकों हृदयों में एक चिनगारी पैदा करने वाली देवेन्द्र नाम की चिनगारी सदा के लिये बुझ गयी।

× × ×

कुछ महीने बाद सरला जेल से छूटी। स्टेशन पर उसके स्वागत के लिये नगर के सैंकड़ों स्त्री-पुरुष पहुँचे हुए थे। गाड़ी से उतरते ही उनकी नजर एक तरफ खड़ी कुमुद पर जा पड़ी जिसकी आँखों से आंसू गिर रहे थे। सरला जाकर उससे लिपट गई। दोनों सिसक-सिसक कर रोने लगीं। स्वागत के लिये आये स्त्री-पुरुषों की आंखें भी सजल हो गईं।

× × ×

देवेन्द्र की अन्त्येष्टि क्रिया शान्ति कुंज के अहाते* के ही एक कोने में की गई थी। प्रोफेसर शंकर मेनोन ने वहां एक वेदी बनवा दी थी। सरला स्टेशन से आते ही सीधे उस वेदी के पास गई।

---

* केरल के नायर समाज में मृतक का दाह कर्म, अगर घर का अहाता बड़ा हो तो अहाते में ही करने की प्रथा है।

हाय, उसके देवेन्द्र का वही भौतिक चिह्न उसे देखने को मिला।

शोक से विह्वल सरला पछाड़ खाकर उस वेदी पर गिर पड़ी। उसके आंसू बांध तोड़कर वेदी को भिगोने लगे। मानो देवेन्द्र के अदृश्य चरणों को धो रहे हों।

कुछ देर के बाद कुमुद वहां आई और सरला को उठाकर हृदय से लगा लिया। दोनों की आंखें शोकाश्रु बरसा रही थीं और हृदय मूक वेदना से विदीर्ण हो रहे थे।

इति